मिनाती दाश

नकेल कसती ही जा रही है

पॉपुलर एजूकेशन सीरीज – 1

पॉपुलर एजूकेशन एण्ड एक्शन सेंटर (पीस)

पापुलर एजूकेशन सिरीज

नकेल कसती ही जा रही है

PEACE LIBRARY
2451
22/4/09
NEW DELHI

मिनाती दाश

प्रकाशक :

पॉपुलर एजूकेशन एण्ड एक्शन सेंटर (पीस)

विषय–सूची

1. भूमिका I

☐ भाग – I 1

- कृषि समझौता (एओए) 2
- कृषि समझौता – बीते दिनों की बिखरती कहानी
- जी–20 खेमा, कानकुन में वे साथ क्यों आए ?
- कानकुन और जेनेवा की बैठकों का मध्यांतर और जी–20 के बिखराव की कहानी

☐ **जेनेवा की मंत्रिस्तरीय बैठक और जुलाई पैकेजः क्या हुआ और कैसे ?** 10

- जेनेवा की छाप – बातें परदे के पीछे की !
- कृषि व्यापार के तीन विवादास्पद मुद्‌दे और जुलाई पैकेज

☐ **विकासशील देशों ने क्या खोया ?** 24

- निर्यात समर्थन – भारत के सरोकार से परे
- बाजार की सुलभता – संकटपूर्ण भविष्य की चेतावनी
- चक्करदार डब्बों की भूल–भुलैया

☐ **जुलाई रूपरेखा (फ्रेमवर्क) के संभावित परिणाम** 28

- डंपिंग की समस्या में वृद्धि
- विकसित दुनिया में बाहरी प्रतिस्पर्धा पर वास्तविक रोक

- **भाग – II** 34
- **कृषि व्यापार – किसके दिमाग की उपज ?** 36
  - अदृश्य हाथ
  - पैसे का खेल
  - ट्रिप्स – किसके लिए !
- **कारपोरेटी कृषि व्यापार की विकरालता का आतंक !** 42
  - नई जी.एम. तकनीक द्वारा दुनिया को भूख–मुक्त करने के
  - दावे की असलियत
  - कारपोरेटी कृषि व्यापार की अपार शक्ति – ऊर्ध्वाकार
  - एकीकरण बीज से लेकर उत्पाद की बिक्री तक
- **कृषि सेवाएंः गैट्स का अधिकार क्षेत्र** 53
- **भविष्य का एजेंडाः** 55

परिशिष्ट 1– डब्ल्यूटीओ के कृषि समझौते की शब्दावली 61

यह और कुछ नहीं बल्कि एक बॉक्स के फेरबदल की एक्सरसाइज है ताकि विकासशील देशों पर दबाव बनाकर उन्हें अपने अनुकूल किया जा सके'

–विक्टर मैनोटी (इंटरनेशनल फोरम ऑन ग्लोबलाइजेशन) का जुलाई फ्रेमवर्क पर विचार

भूमिका

भारतीय कृषि, विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) और विकास : एक बेमेल कतारबन्दी

भारत की दो–तिहाई से ज्यादा आबादी आजीविका के लिए खेती और उससे जुड़े अन्य कामों पर निर्भर है। इस खेतिहर आबादी में लगभग 80 प्रतिशत छोटे और सीमांत किसान हैं। इसका मतलब यह है कि गरीबी खत्म करने और देश का विकास सुनिश्चित करने के लिए खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण आजीविका का संरक्षण अनिवार्य है। इसी को ध्यान में रखकर देश की कृषि नीतियों की बुनियाद खाद्य–सुरक्षा और रणनीतिक संप्रभुता – नीतिगत मामलों में संप्रभुता के आधार पर रखी गई। राज्य के सक्रिय हस्तक्षेप वाली संरक्षणवादी नीतियों के तहत भारत खाद्य निगम (फूड कार्पोरेशन ऑफ इंडिया – एफसीआई), जरूरतमंदों को खाद्यान्न आदि मुहैया कराने के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली का गठन किया गया; कुछ अहम खाद्यान्नों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य तथा कृषि एवं कृषि सेवाओं के लिए सब्सिडी के प्रावधान बनाए गए। इस कृषि नीति के परिणाम स्वरूप सरकारी सहायता, उपकरण और नीतियों के चलते 1960 के दशक में भुखमरी और खाद्यान्न के अभाव से जूझ रहा भारत 1990 तक अपनी आवश्यकता से अधिक अन्न उपजाने वाला देश बन गया। नेशनल सैंपल सर्वे के आंकड़ों के अनुसार, इसी अवधि में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

भारत 1995 में डब्लूटीओ का सदस्य बना। कृषि समझौता (एओए) डब्लूटीओ का एक अहम हिस्सा है। इस समझौते की शर्त है कि विकासशील देश संरक्षणवादी नीतियों को त्याग कर, अपने खाद्यान्न बाजारों को बिना किसी भेदभाव के देशी विदेशी कंपनियों के लिए खोल दें। डब्लूटीओ की शर्तो के तहत कृषि क्षेत्र की नीतियों में भारी फेरबदल ने आजादी के बाद से इस क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के प्रयासों और उपलब्धियों को निरस्त करना शुरू कर दिया है। ऐसा नहीं है कि राष्ट्रीय कृषि नीतियां दोषयुक्त नहीं थीं लेकिन कृषि क्षेत्र को विकराल कारपोरेटी कृषि व्यापार के हितों की लूट के लिए खोलते ही जनता पर इसके दुष्प्रभाव दिखने लगे हैं। गौरतलब है कि विकसित देश लंबे समय से विकासशील देशों पर अपने कृषि क्षेत्र का तेज गति से, व्यापक स्तरीय ''उदारीकरण'' का दबाव डाल रहे हैं। 1990 के दशक में, ग्रामीण एवं शहरी गरीबों के पौष्टिकता स्तर में गिरावट आई; खाद्य एवं कृषि संगठन (फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गनाइज़ेशन–एफएओ) के एक आकलन के अनुसार देश में निम्न पौष्टिकता स्तर वाले, गरीबी रेखा के नीचे के लोगों की आबादी 22.5 करोड़ (कुल आबादी का 23 प्रतिशत) है, जो अपनी ज्यादातर आय भोजन पर ही खर्च कर देते हैं; हर साल, औसतन 20 लाख छोटे और सीमांत किसान प्रकारांतर से अपनी जमीन से बेदखल होकर भूमिहीन मजदूर में तब्दील हो रहे हैं; 1997 से अब तक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक में, अंतरराष्ट्रीय बाजार के लिए कपास उगाने वाले 6000 से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं; उत्पादन लागत में 100–400 प्रतिशत की वृद्धि हुई और वास्तविक आय में उल्लेखनीय कमी, जिससे पहले से ही दुर्लभ ग्रामीण आजीविका की स्थिति और भी दयनीय हो गई। भारतीय किसानों को अंतरराष्ट्रीय बाजार में समाहित करने और संरक्षणवाद को समाप्त करने की दोहरी प्रक्रिया से किसान उपभोक्ता बाजार के अभूतपूर्व उतार–चढ़ाव के जाल में फंसते गए। समुचित सामाजिक सुरक्षा तंत्र के अभाव में किसान हताशा के शिकार हो रहे हैं। कार्यान्वयन में मामूली अंतर को छोड़कर डब्लूटीओ के कानून और इसका ढांचा एकलवादी और सार्वभौमिक हैं। रोजगार, आजीविका और खाद्य–सुरक्षा के मामलों में विकसित और विकासशील देशों के कृषि क्षेत्रों में व्यापक, स्पष्ट अंतरों के बावजूद, दोनों के प्रति डब्लूटीओ का बर्ताव निर्णायक किंतु विवादास्पद हैं। दरअसल, अभी तक इसकी ज्यादातर नीतियां बाकी दुनिया में विकास की कीमत पर विकसित दुनिया के हितों का पोषण करने वाली रही हैं। 'डंपिग' विकसित देशों को वैधता प्रदान करने वाली शांतिधारा (देखें परिशिष्ट 1) और विभिन्न बॉक्सों में सब्सिडी के बारे में दी गई जानकारियां इस बात की पुष्टि करती हैं।

आजीविका के लिए खेती बनाम व्यापारिक खेती

विकसित और विकासशील देशों की कृषि अर्थव्यवस्थाओं में जमीन–आसमान का फ़र्क है। विकसित देशों में कृषि अर्थव्यवस्था का नियंत्रण बहुराष्ट्रीय चरित्र और बहुत बड़े–बड़े फार्म वाली कुछ कृषि व्यापारिक कंपनियों के हाथ में है। खेती का प्रमुख स्वरूप औद्योगिक है। इन देशों में किसानों की आबादी कुल आबादी का महज 3 प्रतिशत है। और इसमें भी साल दर साल गिरावट आती जा रही है। इससे यह भी पता चलता है कि इन देशों में खाद्यान्न और सब्जियों का पूर्ण रूप से उपभोक्ताकरण हो चुका है। इसका मतलब यह कि औद्योगिक कृषि पर आधारित कुछ कंपनियां अधिकतम लाभ को ध्यान में रखकर समुचित मात्रा में खाद्यान्न का उत्पादन करती हैं और अपने देश में जो खरीद सकते हैं, उन्हें बेचती हैं और निर्यात करती हैं। इन देशों के खाद्यान्न क्षेत्र के आंकड़ों पर सरकारी नजर डालने से कृषि व्यापार की ताकत का अंदाजा हो जाता है। 80 प्रतिशत खाद्यान्न, 81 प्रतिशत मकई और 65 प्रतिशत सोयाबीन के निर्यात पर तीन कंपनियों कारगिल, आर्कर्स डैनियल मिडलैंड (एडीएम) और जेन नोह का एकाधिकार है। ये फर्म इस क्षेत्र की 56 प्रतिशत सब्सिडी पचा जाती हैं। इसके अलावा इन देशों में खाद्य समस्या न तो आजीविका से जुड़ी है और न ही यह विकासशील देशों की तरह रोजगार का माध्यम है।

यह स्थिति भारत जैसे देशों की स्थिति से बिल्कुल अलग है जहां बहुसंख्यक आबादी आजीविका या छोटी जोत की खेती (औसत खेत का आकार 0.5 एकड़) में संलग्न है। यहां औद्योगिक खेती नगण्य है। छोटे या औसत किसान ही, नगदी की आवश्यकता पूर्ति के लिए थोड़ी बहुत अतिरिक्त उपज बेचते हैं। 80 प्रतिशत से अधिक बीज की आपूर्ति पर इन्हीं किसानों का नियंत्रण है। इस तरह हम देखते हैं कि भारत जैसे विकासशील देशों में खाद, बीज और खाद्यान्न की आमदरफ्त पर इन किसानों का या फिर सरकार का नियंत्रण है।

इन दोनों अलग–अलग दुनिया में किसानों को मिलने वाली सरकारी सहायता पर दृष्टिपात से कई रोचक तथ्य सामने आते हैं :

जनगणना पर आधारित आंकड़ों के अनुसार, भारत में प्रति किसान औसत सरकारी सहायता 535 रुपये हैं, जबकि अमेरिका में 1999 में यह रकम 2,85,216 रुपये थी, अर्थात् 533 गुना। धनी देशों में कृषि सब्सिडी औसतन 1 अरब डॉलर प्रति दिन है अर्थात इनकी कुल विदेशी सहायता का छः गुना। यदि फर्क इस स्तर के हों तो विकास के स्तर और अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका

को नजर अंदाज करके, ज्यादातर देशों पर उन्हीं या उन्हीं तरह के नियमों को लागू करना कितना तर्क संगत है ? **कृषि समझौते का वास्तविक, ''अदृश्य' उद्‌देश्य विकासशील देशों की उभरती कृषि बाजारों पर धनी देशों का एकाधिकार स्थापित करना है।**

बहुपक्षीय नियमों की मांग पर भारत की सरकारें ऐसी अधोगामी राष्ट्रीय नीतियां बनाती रही हैं जो दरअसल, विश्व बैंक, आईएमएफ, डिपार्टमेंट फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट, जापान इंटरनेशनल कॉरपोरेशन एजेंसी, एडीबी जैसे वित्तीय संस्थानों की नीतियों का धूर्ततापूर्ण घालमेल है। विश्व बैंक और आईएमएफ तथा क्षेत्रीय बैंक विकासशील देशों को कर्ज सुलभ कराने के लिए कृषि बाजार को 'खोलने' की शर्त रखते हैं।

सभी अंतर्राष्ट्रीय संस्थान संयुक्त राष्ट्र से विश्व व्यापार संगठन तक – विकासशील देशों के किसानों की दुर्दशा के लिए धनी देशों की कृषि व्यापार की विसंगत कार्यप्रणाली को जिम्मेदार ठहराते हैं। लेकिन इस यथास्थिति को बदलने में डब्लूटीओ की कोई दिलचस्पी नहीं हैं, दुनिया भर में खेती से आजीविका चलाने में असमर्थ किसान अपने खेतों से मजबूरन बेदखल होते रहे, उसकी बला से!

आगे क्या होगा ? संप्रग सरकार अपने वायदे पूरा करो।

जेनेवा में जिन प्रस्तावों पर चर्चा चल रही है और जिनकी परिणति जुलाई फ्रेमवर्क है, वे डब्लूटीओ के सदस्यों, खासकर विकसित देशों – की राष्ट्रीय राजनीति तथा खाद्य सामग्री और परिष्कृत खाद्यान्न के व्यापार में संलग्न बहुराष्ट्रीय कृषि–व्यापार कंपनियों के निर्यात हितों को परिलक्षित करते हैं। डब्लूटीओ के वार्ताकार विकासशील देशों की आर्थिक और सामाजिक जरूरतों को नजरअंदाज करते रहे हैं। सबसे खतरनाक बाजार–विकृति – डंपिंग – जो किसी भी अर्थव्यवस्था को पंगु कर सकता है से निजात दिलाने की दिशा में भी डब्लूटीओ ने कोई प्रयास नहीं किया। इससे भी चिंताजनक तो यह है कि मौजूदा डब्लूटीओ का कृषि समझौते या इसमें प्रस्तावित परिवर्तनों में भोजन के मानवाधिकार और आर्थिक विकास के आधार के रूप में एक जीवंत ग्रामीण क्षेत्र के निर्माण के बुनियादी उद्‌देश्यों के प्रति प्रतिबद्धता को शामिल नहीं किया गया है। यद्यपि भारतीय प्रतिष्ठान दावा कर रहे हैं कि डब्लूटीओ में इसे कोई खास नुकसान नहीं हुआ, लेकिन यदि जुलाई फ्रेमवर्क लागू हुआ तो भारतीय कृषि क्षेत्र पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा क्योंकि इसे विकसित देशों की इच्छानुसार उन्हीं की शब्दावली में तैयार किया गया है। इस दस्तावेज में ब्लू

बॉक्स को विस्तारित करके 'संवेदनशील उत्पाद' की कोटि में शामिल कर लिया गया है। प्रकारान्तर से जुलाई फ्रेमवर्क विकसित देशों के कृषि व्यापार के ही हित साधने का एक दस्तावेज है।

इन सब बातों को देखते हुए कहा जा सकता है कि दिसंबर 2005 में हांगकांग में होने वाली मंत्रिस्तरीय बैठक भारत सरकार को अपनी जनता ज्यादातर किसान की पक्षधरता दिखाने का एक अच्छा अवसर है। इस सरकार को यह नहीं भूलना चाहिए कि किसानों का मत 1991 के बाद की, उदारीकरण के प्रति प्रतिबद्ध सरकारों की शोषणकारी नीतियों के विरुद्ध था। गौरतलब है कि सरकार चाहे जिस दल या गठबंधन की रही हो, सभी ने किसान–विरोधी सिंचाई, बिजली और खेती की नीतियों का अनुमोदन किया तथा बिना किसी सुरक्षा कवच के किसानों को अंतर्राष्ट्रीय बाजार की धूर्तताओं के हवाले कर दिया। आंध्र प्रदेश में तेलगू देशम तथा महाराष्ट्र और कर्नाटक में कांग्रेस सरकारों के पतन, किसानों के उदारीकरण के विरोध के परिचायक हैं। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) ने अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम (सीएमपी) में 'सभी किसानों को आयात के विरुद्ध समुचित सुरक्षा – खासकर अंतर्राष्ट्रीय बाजार में मूल्यों के गिरावट की स्थिति में – प्रदान करने' का वायदा किया है। (यह वायदा आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र के कपास उगाने वाले किसानों की दुर्दशा की याद दिलाता है।)

ऐसे हालात में जब सुरक्षाकवच की समाप्ति का खतरा किसानों के सिर पर मंडरा रहा था, न्यूनतम साझा कार्यक्रम (सीएमपी) में जोर देकर कहा गया, "संप्रग सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि उगाही और विक्रय की सरकारी एजेंसिया गरीब और पिछड़े राज्यों और जिलों के किसानों पर विशेष ध्यान दें"। इसमें आगे कहा गया है कि "व्यापार की शर्तें किसानों के पक्ष में होंगी।" हांगकांग में होने वाली पांचवीं मंत्रिस्तरीय बैठक, भारत की मौजूदा सरकार के लिए अच्छा अवसर है कि वह शब्दाडंबर छोड़, अपने वायदों के प्रति गंभीरता का प्रदर्शन करे। जिस आवाम ने इस सकार को सत्तासीन किया है उसके प्रति जवाबदेही प्रमाणित करने का यह एक अच्छा अवसर होगा।

भाग – I

यह भाग कृषि समझौतों की पृष्ठभूमि से हमें अवगत कराता है साथ ही जी–20 का उद्‌भव – इसकी अल्प अवधि तक कायम रही एकता किस प्रकार योजनाबद्ध ढंग से खत्म की गयी और जेनेवा समझौता इसके परिणाम एवं संभावित प्रभाव।

ऐतिहासिक तौर पर यदि हम देखें तो पायेंगे कि कृषि–समझौते (ए.ओ.ए.) उत्तरी देशों के हाथ के वे हथियार हैं जिनके बल पर वे कृषि उत्पादों की विकसित तथा विस्तृत हो रही बाजार पर नियंत्रण कर रहे हैं। यह समझना एकदम आसान है कि कृषि आधारित अर्थव्यवस्था एवं कृषि समझौते (ए.ओ.ए.) की नीतियों के मध्य गुप्त अन्तर्विरोध का ही परिणाम था कि कानकुन मंत्रिस्तरीय वार्ता के दौरान जी–20 का उद्‌भव हुआ। यह विकासशील देशों के एक साझे मंच के रूप में विकसित हुआ, जहां वे एकजुट हो शक्तिशाली आवाज बुलन्द कर सकें। कानकुन एवं जेनेवा के मध्य इस चुनौतीपूर्ण मंच को योजनाबद्ध ढंग से एक सोची–समझी रणनीति के तहत ध्वस्त कर दिया गया। यह सब इसलिए किया जा रहा था जिससे कि किसी ऐसे प्रयास का मुंहतोड़ जवाब दिया जाय जो कारपोरेट के हित की, जन विरोधी कृषि नीतियों को डब्ल्यू.टी.ओ. समझौतों के आधार पर वैधानिकता दिलवाने में रोड़ा बने।

जेनेवा समझौता एक ऐसे सौदे के रूप में समाप्त हुआ जिसे जुलाई फ्रेमवर्क के नाम से जाना जाता है जो उत्तरी देशों तथा उनके कृषि व्यापार के हित में बेईमानीपूर्ण ढंग से मोड़ा गया है। इस फ्रेमवर्क ने सफलतापूर्वक डब्ल्यू.टी.ओ. की नीतियों का लोकतांत्रीकरण किया है। इसके क्रियान्वयन का मतलब होगा दक्षिणी देशों में जी–5 देशों द्वारा 'डंपिंग' तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में मूलभूत आवश्यकता की वस्तुओं पर इनका पूर्ण नियन्त्रण।

कृषि समझौता (एओए)

कृषि समझौता – नीतियों की बिखरती कहानी। 1995 तक कृषि क्षेत्र व्यापार से परे था। गैट का सरोकार 'उपभोक्ता सामग्रियों' के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से था। इसमें खेती शामिल नहीं थी। खेती को उपभोक्ता सामग्री नहीं माना जाता था। इसलिए व्यापार के अहम पहलू के क्षेत्र में कृषि प्रभावहीन था।

गैट की बैठकों के उरूग्वे दौर (1987–93) ने नियमों का ऐसा ढांचा बनाया जिसका मकसद संरक्षण और व्यापार समर्थन में कमी करना था। इसकी परिणति डब्लूटीओ के गठन में हुई अमेरिका और मोन्सांटो तथा कारगिल जैसी कृषि व्यापार की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के अथक प्रयास से कृषि समझौते को डब्लूटीओ में शामिल किया गया। खाद्यान्न और साग–सब्जी दोनों के ही कृषि व्यापार की एक फायदेमंद उपक्रम के रूप में पहचान के चलते ही कृषि समझौते का प्रतिपादन किया गया। एफएओ और डब्लूएचओ के एक संयुक्त निकाय, कोडेक्स के अनुसार, भोजन के व्यापार का आकार अपार है – 3000 अरब – 4000 अरब डॉलर प्रतिवर्ष। लेकिन बाजार की जड़ता के चलते मुनाफे का पिटारा खुलना मुश्किल था। इसका मतलब यह हुआ कि उत्तरी दुनिया की कृषि व्यापार की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के अपार मुनाफे के लिए जरूरी है कि उन्हें विकासशील दुनिया की कृषि एवं उससे जुड़ी सेवाओं की उभरती बाजार की सुलभता निर्बाध हो। इसके अलावा धनी देशों के शासक वर्गों को यह भी एहसास हो गया कि भारत जैसे विकासशील देश सारे साल उत्तरी दुनिया की सुपरबाजारों एवं विकासशील देशों के रईसगाहों में सस्ती कीमत पर साग–सब्जी की आपूर्ति कर सकते हैं। अगली मंत्रिस्तरीय बैठक दिसंबर 2005 में हांगकांग में होगी। इससे पहले 4 मंत्रिस्तरीय बैठकें हो चुकी हैं – उरूग्वे (1987–83), सिएटल दिसंबर 1999, दोहा नवंबर 2001 और कानकुन सितंबर 2003।

शुरू से ही कृषि के मुद्दे पर विकसित और विकासशील देशों में मतभेद रहे हैं।

यह कृषि समझौते की विवादास्पद प्रकृति का परिचायक है। सिएटल ने डब्लूटीओ के जनविरोधी चरित्र को उजागर किया। विरोध प्रदर्शनों ने वार्तालाप के 'फौजी ढांचे' को हिला दिया। दोहा विवादास्पद बना रहा। फिर भी विकसित दुनिया तथा फार्मेसी एवं कृषि व्यापार में संलग्न कंपनियों ने मतलब भर के मुनाफे का जुगाड़ कर ही लिया। नागरिक समाज के अपार दबाब के चलते वार्तालाप के दोहा दौर को ट्रिप्स के प्रावधानों पर पुनर्विचार और संशोधन का वायदा करना पड़ा। ट्रिप्स अपने आप में दुनिया भर के किसानों खासकर विकासशील देशों के किसानों के मौलिक अधिकारों के नजरअंदाज करने और उन्हें अपूरणीय क्षति पहुंचाने के लिए पर्याप्त है। गौरतलब है कि ट्रिप्स के तहत किसान कृषि व्यापार और फार्मेसी उद्योग को पेटेंट का अधिकार सौंपकर 'क्या' और 'कैसे' उगाने के अपने अधिकार की स्वतंत्रता खो देता है।

जी–20 खेमा, कानकुन में वे साथ क्यों आए ?

"जी–20 ने यूरोपीय संघ एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यापार वार्ता पर कायम एकाधिकार को तोड़ा।

– मुंबई विश्व सामाजिक मंच (डब्लू.एस.एफ. 2004) में ब्राजील के राजदूत क्लाउदुआलो हुग्ने के विचार।

डब्लूटीओ वार्ताओं के इतिहास में कानकुन की बैठक गरीब अमीर देशों के ध्रुवीकरण की गवाह बनी। विकासशील और अविकसित देश क्रमशः जी–'20 और जी–33 के समूहों में संगठित हो गए। जी 20 का नेतृत्व भारत और ब्राजील ने किया। भारत ने जी–33 में भी रुचि दिखायी। इन समूहों ने कृषि व्यापार के मामले में बाकी दुनिया पर विकसित देशों द्वारा स्वार्थी एजेंडा थोपने का डटकर विरोध किया। विरोध की पहल केन्या ने की। अमेरिका और यूरोपीय संघ के किसान विरोधी रवैये के विरोध में बैठक का बहिष्कार करने वाला पहला देश केन्या था।

बैठक स्थल पर किसान नेता लीक्युंग हाए ने अपने को चाकू से घोंपकर अपनी बलि चढ़ा दी। उनकी त्रासद मौत ने आग में घी का काम किया। हाए की शहादत दुनिया भर के किसानों में डब्लूटीओ की ज्यादतियों की प्रतीक बन गई– खासकर खेती के क्षेत्र में।

विकासशील देशों के खेतिहर हितों की रक्षा के लिए, कानकुन की मंत्रिस्तरीय बैठक में जी–20 का उदय हुआ। इस समूह ने विकसित देशों के स्वार्थी मन्सूबों से सीधे टक्कर लेते हुए कृषि सुधार की किसी भी तरह की प्रतिबद्धता से इंकार

कर दिया और विकासशील देशों के बाजारों की सुलभता के लिए दबाव बनाया।

कानकुन और जेनेवा की बैठकों का मध्यांतर और जी–20 के बिखराव की कहानी

मूल योजना के तहत कृषि क्षेत्र में सुधार का प्रारूप तैयार करके 2005 तक डब्लूटीओ के कृषि अध्याय की शुरूआत हो जानी थी। लेकिन कानकुन में विकासशील देशों के बहिष्कार ने धनी देशों के खेल में खलबली मचा दी। बहुपक्षीय वार्ता टूटने के कगार पर पहुंच गई। डब्लूटीओ की जनरल कौंसिल की जुलाई 2004 में जेनेवा में होने वाली अगली बैठक डब्लूटीओ के रास्ते को निष्कंटक बनाने का अंतिम मंच था। बाकी देशों को बहुपक्षीय वार्ता में बनाए रखने का विकसित देशों का यह आखिरी अवसर था सो उन्होंने कोई कोर–कसर नहीं छोड़ी। इस उद्देश्य में कामयाब होने के लिए जेनेवा में डब्लूटीओ के ढहते साम्राज्य को पुनर्जीवित करना आवश्यक था। इस तरह जेनेवा व्यापार की भूमंडलीय, बहुपक्षीय प्रणाली पुनर्जीवन का प्रतीक बन गया।

- **जी–5 की रणनीतिः साम, दाम, दंड, भेद**

"हम अपनी सारी ताकत लगाकर विकासशील देशों को समझाने में लगे हैं कि यह समझौता उन्हीं के हित में है"।

जुलाई फ्रेमवर्क की तैयारी के बारे में इंग्लैंड की व्यापार मंत्री पेट्रीसिया हेविट का बयान :–

कृषि समझौते का मकसद "कृषि व्यापार की बाजारों के प्रतिबंधों और विकृतियों को समाप्त करना है।" अंतरराष्ट्रीय व्यापार को विकृत करने की विकासशील देशों को आदत पड़ चुकी है। उनके इस किसान विरोधी कृत्य की निंदा करने की बजाय, डब्लूटीओ, उनके हितों के वर्चस्व की स्थापना का मंच बन गया है। अपनी सरहदें खोलने की बजाय, लोकतंत्र के मूल्यों की धज्जियां उड़ाते हुए ये देश विकासशील और अविकसित देशों की सरहदें तोड़ने के लिए साम, दाम, भेद और दंड, सभी उपायों को अपना रहे हैं। डराने–धमकाने और दादागीरी की राजनीति से लेकर अंतरराष्ट्रीय सहायता और व्यापार पर नियंत्रण की अपनी ताकत के इस्तेमाल का कोई तरीका इन्होंने बाकी नहीं छोड़ा। जनरल कौंसिल की जेनेवा बैठक इसकी चश्मदीद गवाह हैं।

—धौंस और रिश्वत

सहायता पर रोक

डब्लूटीओ में केन्या विकासशील देशों के हितों का सबसे मुखर पैरोकार रहा है। जुलाई बैठक से कुछ दिनों पहले 21 जुलाई को भ्रष्टाचार के मामले सही ढंग से न निपटाने के नाम पर वहां की ''मौजूदा शासन के हालात'' का कारण बताकर यूरोपीय संघ ने केन्या को मिलने वाली 6.02 करोड़ डॉलर की सहायता राशि पर रोक लगा दी। जानकारों का कहना है कि यूरोपीय संघ के इस कदम का मकसद जेनेवा बैठक में केन्या की मुखरता की धार को कुंद करना था।

अफ्रीकियों पर अफ्रीकी विकास और अवसर अधिनियम III (अफ्रीका ग्रोथ एंड अपरच्यूनिटीज ऐक्ट – एजीओए) III का प्रहारः

एजीओए कुछ प्रमुख अफ्रीकी देशों को लुभाने की योजना है। इसके तहत 2001 से 2003 के बीच केन्या का अमेरिकी निर्यात बढ़कर तीन गुना हो गया – 4.5 करोड़ डॉलर से बढ़कर 15 करोड़ डॉलर। अमेरिका के अलावा अन्य देशों से कपड़ा और धागा आयात कर सकने की अफ्रीकी देशों की ''योग्यता'' की अवधि सितंबर 2004 में समाप्त होने वाली थी। ज्यादातर अफ्रीकी देशों की चिंता अब यह थी कि वे अब स्थानीय स्तर पर कपड़े का उत्पादन नहीं कर सकते क्योंकि अमेरिकी सब्सिडी के चलते उनकी बाजारें अमेरिकी माल से पट गई हैं और अमेरिका से धागे का निर्यात काफी महंगा था।

डब्लूटीओ की जुलाई बैठक के ठीक 2 हफ्ते पहले, 13 जुलाई को राष्ट्रपति बुश ने एजीओए – III के कानून पर दस्तखत करके इसके प्रावधानों को 2008 से बढ़ाकर 2015 कर दिया। इस कानून में प्रावधान है कि अगले तीन साल तक अफ्रीकी देश ''तीसरे पक्ष'' से भी कच्चा माल खरीद सकते हैं। इस पैकेज का उद्देश्य केन्या जैसे अफ्रीकी देशों को लोभ के जाल में फांसना है। कपास पहल बॉक्स 4 के दो पैरोकार बेनिन और माली – भी एजीओए के लाभार्थी हैं।

मिलेनियम चैलेंज एकाउंट

एक विकास सहायता कोष के रूप में मिलेनियम चैलेंज एकाउंट सहस्त्राब्दि

चुनौती खाता का विचार 2002 में जॉर्ज बुश ने आगे बढ़ाया जो 2004 से प्रभावी हो गया। इसे भी लोभ के जाल के रूप में प्रयोग किया गया। एमसीए के तहत 16 विकासशील देशों को 1 अरब डॉलर की सहायता का प्रावधान है। डब्लूटीओ वार्ता सप्ताह के दौरान अमेरिका ने लाभार्थी देशों को फैक्स करके बताया कि वे इस सहायता के सुपात्र हैं। इस लाभ के लिए चुने गए डब्लूटीओ के सदस्य देश हैं : बेनिन, बोलीविआ, घाना, मेडागास्कर, माली, मंगोलिया, मोजांबीक, होंदुरास, लेसोथो, निकारागुआ, सेनेगल और श्रीलंका। गौरतलब है कि कॉटन इनीशिएटिव के दो पैरोकार देश – बेनिन और माली भी इस सूची में हैं।

चीनी के कोटे का आबंटन

तमाम देशों में चीनी एक अहम निर्यात सामग्री है। जुलाई बैठक से एक सप्ताह पहले, 23 जुलाई को, बुश ने अमेरिकी चीनी का कोटा 40 देशों को आबंटित किया। इस प्रणाली के तहत चुने हुए देश, रियायती दरों पर, अमेरिका में चीनी का एक निश्चित कोटा निर्यात कर सकते हैं और अमेरिका उनके लिए बाजार सुनिश्चित करेगा। इस प्रणाली के तहत सबसे ज्यादा लाभार्थी थे : डॉमिनिकन रिपब्लिक (185353 मीट्रिकटन), ब्राजील (152691 मीट्रिकटन), फिलीपीन्स (142160), आस्ट्रेलिया (87,402), ग्वाटेमाला (50,546) और अर्जेंटीना (45,281)।

ऐसा करके अमेरिका ने जी–20 पर सीधे हमला बोला। इस लुभावने पैकेज से वह ब्राजील और फिलीपीन्स को जी–20 से अलग करने में सफल रहा।

वीज़ा में रियायत

अमेरिकी वीजा में रियायत की औपचारिकताएं जुलाई में पूरी हुई और ये रियायतें नाइजीरिया को दी गई।

– धमकियां

अमेरिकी ''खाद्य सहायता''

16 जुलाई दस्तावेज के पहले ड्राफ्ट में कहा गया कि खाद्य सहायता की योजना का मकसद ''अतिरिक्त उपज की खपत'' नहीं है। इसका मतलब हुआ कि खाद्य सहायता अब अनुदान के रूप में दी जाएगी। इसका मकसद अमेरिकी योजना पीएल 480 के तहत खाद्य सामग्री के रूप में कर्ज पाने वाले देशों को ''अनुशासित'' करना है। इसके बल पर अमेरिकी व्यापारिक प्रतिनिधियों ने

पीएल 480 के लाभार्थी देशों को जुलाई दस्तावेज की भाषा के विरुद्ध बोलने की चुनौती दी। इसमें निहित संदेश यह था कि दस्तावेज की भाषा का विरोध करने वालों को अमेरिकी खाद्य सहायता से वंचित कर दिया जाएगा। इसके परिणाम स्वरूप कम विकसित देश और मंगोलिया जैसे कई अन्य देश विकासशील देशों के खेमे से निकलकर अमेरिका के साथ खड़े हो गए।

जापानी द्विपक्षीय सहायता

जापान ने अपनी द्विपक्षी सहायता कार्यक्रम के लाभार्थी देशों पर दबाव बनाना शुरू किया। जुलाई के प्रथम सप्ताह में जापान ने अन्य सदस्य देशों के प्रतिनिधियों से मिलने के लिए अपना एक प्रतिनिधि मंडल जेनेवा भेजा। जापानी सहायता पाने वाले देशों खासकर एशियाई देशों को जापान ने चेतावनी दी कि वे डब्लूटीओ एजेंडा से सिंगापुर के तीन मुद्दों (निवेश, प्रतिस्पर्धा और सरकारी कामकाज में पारदर्शिता) को हटाने समेत उसके आक्रामक हितों का विरोध न करें। उन्हें बताया गया कि ढांचागत विकास के लिए उनको मिलने वाली सहायता पर पुनर्विचार किया जा सकता है।

इसके परिणामस्वरूप दोहा कार्यक्रम से सिंगापुर के तीन मुद्दों को हटाने पर इन देशों ने नरम रूख अपनाया। ये मुद्दे वैसे डब्लूटीओ में अभी भी बरकरार हैं।

जी–20 के खास खास देशों को तोड़कर अपने साथ कर लेना

- **"सबसे मुखर देश को बाकी समूह से अलग कर दो"**

विकसित देशों ने जी–20 की मुखरता और उसके प्रभाव को कम करने के लिए कई हथकंडे अपनाए। उन्होंने ब्राजील और भारत को कृषि वार्ताओं का प्रमुखकर्ता बना दिया जो कृषि क्षेत्र ही व्यापार उदारीकण के रास्ते के प्रमुख रोड़े थे। अप्रैल की शुरूआत में कृषि दस्तावेज के ड्राफ्ट की तैयारी के लिए एक समूहेतर समूह – 5 (नॉन–ग्रुप–5 (एनजी5) का गठन किया गया। एनजी5 में भारत और ब्राजील के अलावा अन्य देश हैं : अमेरिका, यूरोपीय संघ और आस्ट्रेलिया। ब्राजील और भारत जी–20 के प्रमुख सदस्य देश हैं जिन्होंने जुलाई फ्रेमवर्क के कृषि दस्तावेज के निर्माण में अहम भूमिका निभायी थी। इस प्रक्रिया में प्रमुख खिलाड़ी होने के चलते, इन देशों को अलग–अलग कुछ रियायतें भी मिलीं।

- **अस्थिर एकता और सरोकारों की विविधता के चलते जी–20 में दरार:**

जी–20 के ज्यादातर प्रभावशाली देश ब्राजील की ही तरह कृषि निर्यातक हैं

और उनकी भलाई के लिए यूरोपीय संघ और अमेरिका द्वारा दी जाने वाली कृषि सब्सिडी का अंत और वहां की बाजारों की सुलभता आवश्यक है। इंडोनेशिया समेत कई देशों को लगा कि जी–20 विकासशील देशों के हितों और कम मूल्य के आयात वाले छोटे किसानों की सुरक्षा के प्रति गंभीर नहीं है। उनके सरोकार उत्तरी देशों के बाजारों की सुलभता न होकर अपने बाजारों को यूरोपीय संघ और अमेरिका के सस्ते माल की भरमार से बचाना है। उसी तरह भारत का प्रमुख सरोकार सब्सिडी के मौजूदा स्तर को जारी रखने का है, जिसे कम करने की प्रतिबद्धता पर वह हस्ताक्षर कर चुका है।

सरोकारों की विविधता के चलते जी–20 की एकता एक तदर्थ एकता थी, जो सदस्य देशों को निजी लाभ के जाल में फंसने से नहीं रोक सकी। यह बात विकसित देशों की समझ में जल्दी आ गई और उन्होंने एक एक करके समूह को तोड़ना शुरू कर दिया। उनकी अपेक्षा के अनुरूप दक्षिण के देश और उनके रहनुमा गरीब देशों और समुदायों के पक्ष में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के नियम और व्यवहार निर्धारित करने तथा विकसित देशों की कृषि सब्सिडी की समाप्ति तथा बाजारों की समुचित सुलभता की व्यापक मांग से पीछे हटते गए। गौरतलब है कि धनी देशों की सब्सिडी के ही चलते उनकी 'अतिरिक्त' उपज से विदेशी कृषि बाजार पट गए हैं।

● विकासशील देशों की सामरिक यात्रा

जी–90 (जिसमें अफ्रीकी और कैरिबियाइ देश भी शामिल हैं) मारीशस की बैठक के लिए निमंत्रण को न ठुकराकर अमेरिका ने वहां अपने व्यापारिक प्रतिनिधियों को भेजा। अमेरिकी प्रतिनिधियों ने टकराव की भाषा की बजाय मान–मनौवल के शब्दाडंबर का इस्तेमाल किया। जी–90 कृषि क्षेत्र में 'मानवीय समझौते' के लिए राजी कर लिया गया और **नामा** पर वार्ता की सफल पहल के लिए सदस्य देशों से आग्रह किया गया। जी–7 ने जी–20 को तोड़ने की तमाम रणनीतियों का मिश्रण तैयार किया: वित्तीय सहायता के बल पर राजनैतिक कूटनीति, अलग अलग देशों को उनकी जरूरत को देखते हुए अपने डंपिंग का तोहफा देना, विरोधी पक्ष को झुकाने के लिए चुनकर कुछ देशों को रियायतें देना, आदि। ऊपर से जी–20 के सदस्य देशों के निजी स्वार्थपूर्ति की दौड़ ने यूरोपीय संघ और अमेरिका के काम को असान कर दिया। यूरोपीय संघ और अमेरिका ने इन्हें लुभाना शुरू किया और जी–20 की एकता के दावे चकनाचूर हो गए। भारत और ब्राजील दोनों ही ने अल्पकालीन निजी स्वार्थों के

लिए इस एकता को एक तरफ कर दिया। इन देशों के इस कुकृत्य की जितनी भी भर्त्सना की जाए कम है क्योंकि दोनों ही जी–20 के नेता हैं। दोनों के ही इतने आसान समर्पण से जी–20 की एकता की रीढ़ ही टूट गई और बड़े–बड़े साझे सरोकार धरे के धरे रह गए।

जो भी हो, कानकुन के बाद पहली बार यूरोपीय संघ और अमेरिका ने जी–20 की ताकत को पहचाना और उसे एहसास हो गया कि अपनी व्यापारिक उद्दंडता में विकासशील या विकसित देशों की जायज मांगों को मनमाने ढंग से रौंदना आसान नहीं है।

जेनेवा मंत्रिस्तरीय वार्ता और जुलाई पैकेज : क्या हुआ और कैसे ?

जेनेवा की छाप — बातें परदे के पीछे की !

जेनेवा में जनरल कौंसिल की मीटिंग एक एकांत प्रक्रिया बनी रही। हफ्ते के पहले हिस्से में नॉन ग्रुप (एजी–5) के केवल 5 सदस्यों के बीच ही मुख्य कृषि समझौता हो सका। दरअसल, 30 जुलाई का संशोधित ड्राफ्ट एनजी 5 की वार्ताओं के अतिरिक्त निष्कर्षों के आधार पर न्यूजीलैंड के राजदूत टिम ग्रोसर ने तैयार किया था। इसके बाद 20 देशों के एक समूह ने एक बंद कमरे में शुक्रवार की शाम से शनिवार की शाम तक, इस ड्राफ्ट पर विचार–विमर्श किया। विचार–विमर्श के बाद इन 20 देशों ने इस ड्राफ्ट का अनुमोदन कर दिया। इनके द्वारा प्रस्तावित संशोधनों पर विभिन्न समूहों अफ्रीका एवं एलडीसी, जी–20 और जी–33 में अलग–अलग चर्चाएं हुईं जहां उन्हें बिना आपत्ति के स्वीकार कर लिया गया। पर्दे के पीछे की बैठकें संदेह पैदा करती हैं तथा पारदर्शिता और प्रतिनिधित्व की जरूरत की अहमियत को रेखांकित करती हैं। हफ्ते भर की 'गुप्त' बैठकों के व्यस्त दौर के बाद 1, अगस्त को जेनेवा में जुलाई पैकेज पर सहमति हो गई। डब्लूटीओ ने कृषि व्यापार, गैर कृषि व्यापार सुलभता (नामाक), सेवा क्षेत्र तथा 'विकास' के मुद्दों व आगे के कदमों की रूपरेखा के रूप में इसे अपनाया। जुलाई पैकेज के ही आधार पर वार्ताओं के अगले चरण में सिद्धातों और आंकड़ों की मोडैलिटी को अंतिम रूप दिया जाएगा, मसलन किन करों में कितनी कटौती हो।

जेनेवा महासमिति की बैठक

कानकुन बैठक की नाकामी की जिम्मेदारी के आरोप से नवाजे गए विकासशील देश, इस बार इस तरह के आरोपों के भय से उन सब बातों के लिए राजी हो गए जिनका वे अब तक विरोध करते आए थे। गौरतलब है कि इस दस्तावेज

के दोनों ही ड्राफ्टों – 16 जुलाई और 30 जुलाई की विकासशील देशों ने जमकर आलोचना की थी। लेकिन रातों रात इनमें से ज्यादातर ने गुप्त समझौतों के दबाव तथा किसी 'अदृश्य शक्ति' की प्रेरणा या भय के चलते अंतिम ड्राफ्ट को मंजूरी दे दी। 'विजेताओं' ने डब्लूटीओ के लोकतांत्रिक चरित्र का नगाड़ा पीटना शुरू कर दिया, यह अलग बात है कि इस प्रक्रिया में उन्होंने लोकतांत्रिक आदर्शों और मूल्यों को पूरी तरह से नकार दिया।

यूरोपीय संघ और अमेरिका के वार्ताकारों की भरमार

महासमिति की इस बैठक में प्रमुख भूमिका राजदूतों की होनी थीं डब्लूटीओ ने स्पष्ट कर दिया था कि मंत्रियों या प्रतिनिधिमंडल की भागीदारी न तो आवश्यक थी और न ही वांछनीय। ज्यादातर विकासशील देशों के मंत्रियों की अनुपस्थिति का मतलब था कि महत्वपूर्ण फैसले नहीं लिए जा सकते थे। भारत और ब्राजील के मंत्रियों समेत जेनेवा में कुल 45 व्यापार मंत्री थे। कानकुन में निर्णायक भूमिका निभाने वाले केन्या और नाइजीरिया जैसे कई देशों के मंत्री बैठक से नदारत थे। बैठक में यूरोपीय संघ, अमेरिका और जापान के व्यापारिक प्रतिनिधियों और राजनैतिक प्रतिनिधिमंडलों का वर्चस्व था।

नागरिक समाज से दूरी

मंत्रिस्तरीय सम्मेलन के समय इलाके में प्रवेश पर कड़ा प्रतिबंध था। पूरी की पूरी कार्यवाही को आम जनता से दूर रखा गया। कानकुन में निर्णायक भूमिका निभाने वाला 'नागरिक समाज' यह समझ पाने में पूरी तरह नाकाम रहा कि व्यापारिक शक्तियां उहापोह की स्थिति से उबरकर इतनी जल्दी संगठित कैसे हो गई।

महासमिति के फैसलों के तौर–तरीके के दूरगामी परिणामः

जुलाई पैकेज को मंत्रिस्तरीय घोषणा के रूप में पेश किया गया जब कि सम्मेलन में मंत्रिगण नदारत थे। सिएटल और कानकुन के मंत्रिस्तरीय सम्मेलनों की नाकामी के बाद डब्लूटीओं सचिवालय और व्यापारिक शक्तियों को एहसास हो गया कि अहम फैसलों के लिए मंत्रियों के सम्मेलन ठीक नहीं हैं। मंत्रियों के सम्मेलन के विरोध में एनजीओ और जनसंगठनों के प्रदर्शनों का खतरा ज्यादा रहता है। इसमें ऐसे मंत्री भी आ जाते हैं जो पेशेवर वार्ताकार न होकर विशुद्ध राजनीतिज्ञ होते हैं और अपने देश के हितों के समर्थन में 'अड़ियल' रूख अपना लेते हैं। मीडिया भी ज्यादा ध्यान देती है इसलिए पर्दे के पीछे की बातों के

आदी वार्ताकारों द्वारा गोपनीयता के प्रयासों के बावजूद, सम्मेलनों की कार्यवाहियां ज्यादा पारदर्शी हो जाती हैं।

जेनेवा बैठक के तौर–तरीकों से यह स्पष्ट हो गया कि विकसित देश उभरती नई बाजारों पर विजय की कभी न मिटने वाली अपनी व्यापारिक भूख मिटाने की हताशा में, विकासशील देशों पर अन्यायपूर्ण एवं असंगत फैसले थोपने के लिए किसी भी हद को पार कर सकते हैं।

कृषि व्यापार के तीन विवादास्पद मुद्दे और जुलाई पैकेज

कृषि वार्ताएं तीन स्तंभों के इर्द गिर्द घूमती रही हैं : बाजार की सुलभता, घरेलू और निर्यात समर्थन तथा विशेष एवं भेदभाव का बर्ताव (स्पेशल एवं डिफरेंशियल ट्रीटमेंट – एसडीटी)

बॉक्स 1

तीन स्तंभः

बाजार सुलभताः स्थिरकर, व्यावहारिक कर, कर के अलावा अन्य 'बिघ्न बाधाएं' कोटा की कर दर, विशेष सुरक्षा उपाय, डंपिंग – विरोधी शुल्क से निपटने के उपाय।

घरेलू समर्थनः अंबर बॉक्स, ब्लूबॉक्स, ग्रीन बॉक्स, दि मिनिमिस, व्यापारेत्तर सरोकार (एनटीसी)। ज्यादा जानकारी के लिए बॉक्स 5 देखें)

निर्यात समर्थनः निर्यात सब्सिडी और निर्यात ऋण।

वि◻शि और भेदभाव का बर्ताव (एसटीडी) विशेष उत्पाद, संवेदनशील उत्पाद और शांति अधिनियम। (परिभाषाओं के लिए परिशिष्ट 1 देखें)

● जेनेवा में जुटे समूह और उनके सरोकार

जी–33

"निर्णय का अधिकार" जी–33 के एजेंडा में सबसे ऊपर है। यह समूह डब्लूटीओं वार्ताओं में सीमावर्ती उपायों की केंद्रीयता का हिमायती है।

जी–90

इस समूह में अपेक्षाकृत कमजोर देश हैं लेकिन कानकुन में अपने वीटो के उपयोग से इसने अपनी अहमियत दिखा दी। कानकुन की नाकामी में इस समूह की अहम भूमिका थी। अपनी अर्थव्यवस्था के बचाव में सीमावर्त उपायों पर इसकी वरीयता है। इसके सदस्य अमेरिका और यूरोपीय संघ के देशों से मांग कर रहे थे कि वे उनके बाजारों को अपने सस्ते और घटिया माल से पाटना बंद कर दें। इस समूह के कई देशों की अर्थव्यवस्था का आधार कपास जैसी फसलें हैं और समूह इन फसलों के निर्यात के लिए बाजारों की सुलभता चाहता है।

जी–20

जी–20 के कुछ सदस्य खासकर भारत– कृषि समझौते में निर्धारित सुरक्षा के प्रखर पक्षधर हैं। 'एकता' के टूटने के डर से इस पक्ष के विरोधी सदस्य ब्राजील, अर्जेंटीना खुलकर विरोध नहीं कर सके।

अमेरिका, यूरोपीय संघ और केर्नस् समूह

इस समूह के सदस्य इस तर्क पर ''निर्णय के अधिकार'' का विरोध करते हैं कि इससे उदारीकरण की प्रक्रिया में बाधा पड़ेगी। इस समूह के कई ताकतवर खिलाड़ी इस बात को मानते हैं कि कृषि पर समझौते के लिए विकासशील देशों को कुछ रियायतें देनी पड़ सकती हैं। इनमें से कोई भी निर्धारित सुरक्षा (सेलेक्टिव प्रोटेक्शन) के समर्थन में आगे नहीं आया। कनाडा और यूरोपीय संघ के देशों को अपनी खुद के बाजारों की रक्षा की चिंता है और वे आयात की भरमार के विरुद्ध और संवेदनशील या प्रवृत्ति – विशेष उत्पादों की विशेष सुरक्षा की आवश्यकता महसूस करते हैं। अमेरिका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड सुरक्षा उपायों के सबसे मुखर विरोधी हैं जबकि जी–10 (जापान आदि) के देश अपने रक्षात्मक हितों के चलते सुरक्षा उपायों के हिमायती हैं।

कारपोरेट समूह

अमेरिकी निर्यात और विकासशील बाजारों की सुलभता का सबसे ज्यादा लाभ बहुराष्ट्रीय कंपनियों को होगा, इसलिए वे करों में भारी कटौती के लिए पर्दे के पीछे के खेल में वहां मौजूद थे। वे अपनी पूरी ताकत से सरकारों पर दबाव बना रहे थे कि 'निर्णय के अधिकार' का प्रस्ताव हर हाल में निरस्त हो जाए।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थान

गरीब देशों की घरेलू कृषि बाजार के "उदारीकरण" में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों – आईएमएफ, विश्वबैंक और क्षेत्रीय बैंकों की प्रमुख भूमिका रही है। कर्ज की शर्तों तथा राष्ट्रीय सहायता कार्यक्रम की प्रतिबद्धता के तहत कई गरीब देशों ने करों में भारी कटौती करके कृषि आयात से सारे प्रतिबंध पहले ही हटा लिए हैं।

डब्लूटीओ में विकासशील देशों को हासिल होने वाली संभावित छूटों का वे इस्तेमाल कर सकेंगे कि नहीं, इसका निर्णय भी ये संस्थान ही करेंगे – कम से कम उन देशों के मामलों में जिन्होंने ढांचागत समायोजन शुरू कर दिया है। जेनेवा महासमिति की बैठक से आदर्श रूप में विकासशील देशों की निम्न अपेक्षाएं होनी चाहिए थीः

क) अमेरिका और यूरोपीय संघ की निर्यात सब्सिडी की समाप्ति

ख) अमेरिका, जापान और यूरोपीय संघ में किसानों की सब्सिडी में क्रमिक कटौती;

ग) अमेरिका और यूरोपीय संघ द्वारा विकासशील देशों के बाजारों को अपने उत्पादों से न पाटने का वायदा;

घ) अमेरिकी बाजारों की सुलभता

ड.) विकासशील देशों के किसानों की आजीविका और देश की खाद्य सुरक्षा कृषि उत्पादों पर निर्भर है, इसलिए अपने कृषि उत्पादों के लिए "विशेष दर्जा" हासिल करना और उनपर और कर कटौती से छूट (भारत की प्रमुख मांग)

च) अंबर बॉक्स को निरस्त करना और ब्लू बॉक्स सब्सिडी में क्रमशः कटौती करते हुए अंततः इसका पूर्ण उन्मूलन (भारत की प्रमुख मांग)।

लेकिन जेनेवा में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। विकसित देशों ने केवल शब्दाडंबर का जाल फैलाया निर्यात सब्सिडी, सब्सिडी में क्रमिक कमी और 'डंपिंग' की समाप्ति के मुद्दों पर उन्होंने कोई ठोस वायदा नहीं किया। गौरतलब है कि इससे भूमंडलीय कृषि विकृत हो गई जबकि विकसित देशों ने विकासशील देशों से कई ठोस रियायतें और उनके बाजारों की सुलभता हासिल कर ली।

- **प्रमुख क्षेत्रों में क्या हुआ ? (निर्यात समर्थन, घरेलू समर्थन, बाजार सुलभता)**

भारत के व्यापार मंत्री कमलनाथ ने सार्वजनिक रूप से दावा किया कि जेनेवा

में सौदेबाजी भारत के लिए लाभप्रद रही । लेकिन कृषि विभाग में जेनेवा समझौते को लेकर खलबली मच गई। कृषि विभाग के सुरक्षा स्रोतों से पता चला कि भारत ने इस समझौते में खोया ज्यादा और पाया कम। सबसे ज्यादा फायदा अमेरिका और यूरोपीय संघ को हुआ और भारत को मिलने वाली रियायतें अभी भी विचाराधीन हैं।

निर्यात समर्थन : सिद्धांततः विकसित देश कृषि सब्सिडी को समाप्त करने के लिए राजी हो गए। निर्यात ऋण 180 दिनों से अधिक का निर्यात ऋण गारंटी या बीमा भी समाप्त कर दिया जाएगा तथा 190 दिनों से कम की निर्यात ऋण गारंटी या बीमा को अनुशासित किया जाएगा। पहली बार विकसित देशों ने ऐसे वायदे किए।

बॉक्स 2

ब्राजील के सरोकार – कृशि सब्सिडी का उन्मूलन

कहा जा रहा है कि चरणबद्ध तरीके से सब्सिडी हटाने का सबसे अधिक फायदा ब्राजील को होगा। कुछ विश्लेषकों के आकलन के अनुसार इससे ब्राजील को 10 डॉलर की दर से लाभ होगा। लेकिन वार्ताओं के स्वरूप को निर्धारित किए बिना इन लाभों को हासिल नहीं किया जा सकता। इसके अलावा, सब्सिडी समाप्त कर देने पर यूरोपीय संघ ग्रीन बॉक्स प्रावधान के तहत किसानों को सीधे भुगतान करके अप्रत्यक्ष निर्यात सब्सिडी जारी रखने के लिए कुख्यात है (मौजूदा सीएजी का भी यही मंसूबा है)। लेकिन ब्राजील का कृषि व्यापार ऐसे डब्लूटीओ समझौते के लिए उतावला था जिससे कि अमेरिका और यूरोपीय संघ में उसके निर्यात में वृद्धि हो और सरकार पर उनके प्रभाव को नजरअंदाज़ नहीं किया जा सके।

लेकिन जुलाई पैकेज में सब्सिडी के उन्मूलन की न तो समय सीमा रखी गई है और न ही इसकी कार्यविधि तय की गई है। जिसका मतलब यह है कि इस मामले में विकसित देशों ने अभी तक कोई प्रतिबद्धता नहीं दर्शायी है तथा अंतरराष्ट्रीय व्यापार में विकसित देशों का समानता का दावा अस्पष्ट बना हुआ है।

बाजार की सुलभता

बाजार की सुलभता के प्रावधानों को 'दुरुस्त' करने के लिए जुलाई फ्रेमवर्क में एक ''पट्टीदार सूत्र'' का वर्णन है। यह सूत्र अत्यधिक दरों में सर्वाधिक कटौती सुनिश्चित करेगा। लेकिन इसके लिए भी कोई निश्चित समय सीमा निर्धारित नहीं है। दस्तावेज में 3 कोटियों – संवेदनशील उत्पाद, विशेष उत्पाद और एसएसएम – को छोड़कर बाकी सभी उत्पादों पर इस फार्मूले को लागू करने की अनुशंसा की गई है।

संवेदनशील उत्पाद–विकसित देश 'संवेदनशील उत्पाद' की एक नई कोटि शामिल करवाने में कामयाब रहे।दरअसल, यह किसी देश द्वारा अपने कृषि उत्पादों के संरक्षण के लिए 'भेदभावपूर्ण बर्ताव' का ही दूसरा रूप है। भारी संरक्षण वाले इस कोटि के कृषि उत्पादों को मानक कर कटौती के मामले में काफी रियायतें हासिल होंगी। 'संवेदनशील उत्पाद' की इस कोटि की अवधारणा बस 15 दिन पहले ही उछाली गई और बिना किसी व्यापक बहस के पैकेज में शामिल कर लिया गया। गौरतलब है कि 'संवेदनशील उत्पाद' के प्रावधान का लाभ कोई भी सदस्य देश उठा सकता है, विकासशील देश भी।

बॉक्स 3

आतंक की रणनीति

अपने 20–40 प्रतिशत उत्पादों को करों में किसी उल्लेखनीय कटौती के प्रभाव से बचाने के लिए यूरोपीय संघ ने 'संवेदनशील उत्पाद' का पाशा फेंका, जो ठीक नंबर पर पड़ गया। अर्थव्यवस्था के लिए अनिवार्य विशेष उत्पाद की उनकी मांग में वार्ताकारों की बाधा के डर से विकासशील देश आसानी से राजी हो गए।

समझा जाता है कि इस कोटि का 'आविष्कार' विकसित देशों के लिए ही किया गया जो कि विशेष उत्पाद और भिन्न बर्ताव के प्रावधान का फायदा नहीं उठा सकते, क्योंकि यह प्रावधान केवल विकासशील देशों के लिए ही है।

इस प्रावधान के परिणामस्वरूप विकासशील देशों के कृषि निर्यात के लिए विकसित देशों के बाजारों की सुलभता की संभावनाएं और भी कम हो जाएंगी।

विशेष उत्पाद – **विकासशील देश अपने ऐसे कृषि उत्पादों को करों की और भी कटौती से बचाने के प्रावधान के लिए संघर्ष कर रहे हैं जिन पर उनकी खाद्य सुरक्षा, किसानों की आजीविका और ग्रामीण विकास की बुनियाद टिकी है।** इस मुद्दे पर अभी तक कोई भी ठोस निर्णय नहीं लिया गया है। जेनेवा पैकेज में कहा गया है कि विकासशील देश अपने समुचित कुछ उत्पादों को विशेष उत्पाद की कोटि में रख सकते हैं जिनके साथ 'नरमी का बर्ताव' किया जाएगा। जी–33 की करों की कटौती की छूट की मांग अभी तक नहीं मानी गई है। जी–33 'आत्म चयन' की मांग करता आ रहा है। इस मुद्दे पर भी कोई ठोस फैसला नही हो सका है। अभी तक के अव्याख्यायित मानकों और समझौतों की व्याख्या 'वार्ताओं के अगले दौर में होगी। विकासशील देशों के हितों को झटका देते हुए इस दस्तावेज के पहले ड्राफ्ट में 'विशेष उत्पाद कोटि के उत्पादों के कर दर के कोटे के विस्तार की कोई आवश्यकता नहीं होगी', अनुच्छेद को हटा दिया गया है। इसका मतलब हुआ कि 'विशेष उत्पाद' भी अब 'टैरिफ दर कोटा विस्तार' के दायरे में आ जाएंगे। इससे घरेलू उत्पादों पर खतरा बढ़ जाएगा क्योंकि विकासशील देशों की बाजारें कृषि समझौते के तहत अमेरिका और यूरोपीय संघ के सस्ते उत्पादों से पट जाएंगी।

विशेष सुरक्षा उपाय (स्पेशल सेफगार्ड मेकेनिज्म – एसएसएम)

मौजूदा समस्याओं और विशेष उत्पाद और विशेष सुरक्षा उपायों के जरिए उनके समाधान पुरानी मांग अभी भी अधर में लटकी है। एस एस एम का प्रावधान विकासशील देशों के ही लिए बना है। लेकिन अभी तक इसको कार्यक्षेत्र और इसकी कार्यविधि को स्पष्ट परिभाषित नहीं किया गया है।

घरेलू समर्थन – इसमें शामिल हैं : अंबर बॉक्स, ब्लू बॉक्स, दि मिनिमिस और व्यापार स्तर सरोकार वार्ताएं इन्हीं के इर्द गिर्द घूमती हैं।

यह एक ऐसा स्तंभ है जिसकी सहायता से अमेरिका और यूरोपीय संघ कृषि को बढ़ावा दे सकेंगे तथा कृषि उत्पादों को डंपिंग द्वारा विदेशी बाजारों में लागत से कम मूल्य पर खपाने में सफल होंगे।

बॉक्स 4

"आपकी अर्थव्यवस्था पर हमारी डंपिंग का दुश्प्रभाव हमारी चिंता का विशय नहीं है"

बाजार पाटने (डंपिंग) की विध्वंसकारी नई प्रथा ने दुनिया भर के किसानों को हताश कर दिया है। जेनेवा में कपास पहल के रूप में इस मुद्दे को जोरदार ढंग से उठाया गया। इस मुद्दे को कपास उत्पादक अफ्रीकी देशों ने उठाया तथा अफ्रीका समूह और अफ्रीका–कैरिबियाई प्रशान्त समूह ने इसका समर्थन किया। इनीशिएटिव ने सम्मेलन में खुलासा किया कि किस तरह अमेरिका अपने 25000 किसानों को 3.7 अरब डॉलर की सब्सिडी देता है तथा वर्तमान प्रक्रिया से कपास की खेती पर निर्भर, पश्चिम अफ्रीका के 1.2 करोड़ किसानों की जिंदगियां तबाह हो रही हैं। इनकी मांगें हैं:

– दोहा प्रस्तावों को लागू करने तक कपास निर्यात की सभी सब्सिडियों का पूर्ण उन्मूलन, कपास के घरेलू समर्थन में औसत से अधिक कटौती, और बाकी कृषि वार्ताओं से अलग एक निश्चित समय सीमा कपास व्यापार को विकृत करने वाले सभी समर्थनों की पूरी तरह समाप्ति ।

– कपास को एक अलग सामग्री माना जाए।

दरअसल, 2002 में डब्लूटीओ के विवाद निवारण पैनल ने भी अमेरिकी कपास सब्सिडी के विरुद्ध फैसला दिया था लेकिन डब्लूटीओ ने उसे लागू करने से इंकार कर दिया।

महासमिति की बैठक में इतना भर हुआ कि डीजी को बेटनवुड इंस्टीट्यूशन्स, एफएओ और अंतरराष्ट्रीय व्यापार केंद्र सहित प्रासंगिक अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से विचार–विमर्श के बाद मौजूदा कार्यक्रमों और अतिरिक्त संसाधनों के जरिए उन अर्थ व्यवस्थाओं को विकसित करने का निर्देश दिया, जिनमें कपास की प्रमुख भूमिका है। यह रवैया डब्लूटीओ पर धनी देशों के वर्चस्व और इसकी निरंकुशता का परिचायक है।

जुलाई फ्रेमवर्क में सभी स्तरों पर अंबर बॉक्स और ब्लू बॉक्स को एक साथ मिलाकर – समर्थन में श्रेणीबद्ध कटौती प्रस्तावित है। उच्चस्तरीय करों में अधिकतम और निम्नस्तरीय करों में न्यूनतम कटौती। व्यापार को विकारग्रस्त करने वाले सभी समर्थनों (एएमएस + न्यूनतम स्वीकार्य + ब्लूबॉक्स) में प्रस्तावित न्यूनतम सालाना कटौती 20 प्रतिशत है। यह व्यापार विकृत करने वाले घरेलू समर्थन में कटौती के दोहा प्रस्ताव के ही अनुरूप लगता है।

बॉक्स 5

भानुमती का पिटारा

डब्लूटीओ की शब्दावली में कृषि समझौते के तहत घरेलू समर्थन को कई कोटियों में बांटा गया है घरेलू सब्सिडियों में से ज्यादातर को विभिन्न रंगों के बॉक्सों का नाम दिया गया है – हरा, अंबर और नीला।

अंबर बॉक्स : अंबर बॉक्स घरेलू समर्थन की वह कोटि है जिसमें कटौती निर्धारित हो चुकी है। इसे समर्थन की समग्र माप व्यापार को विकृत करने वाले समर्थन की मात्रा के जरिए मापा जाता है और इसमें कटौती पर सहमति हो चुकी है। उत्पादन और व्यापार को विकारग्रस्त करने वाले ज्यादातर घरेलू समर्थन कार्यक्रम इसी बॉक्स में है। इसमें मूल्य समर्थन के उपाय और उत्पादन की मात्रा से जुड़ी प्रत्यक्ष सब्सिडी भी शामिल है। अंबर बॉक्स को कृषि समझौते के अनुच्छेद 6 में उन घरेलू व्यापार समर्थनों के ऐसे बॉक्स के रूप में परिभाषित किया गया है जिसमें वे सभी घरेलू समर्थन शामिल हैं जो ब्लू बॉक्स और ''दि मिनिमिस'' में नहीं हैं।

उरूग्वे दौर के उपरांत की डब्लूटीओ वार्ताओं के दौर के शुरू में 'दि मिनिमिस' स्तर से अधिक घरेलू समर्थन वाले, डब्लूटीओ के 30 सदस्यों ने इनमें कटौती के समझौते पर हस्ताक्षर किए। जिन सदस्यों ने अपने घरेलू समर्थन में किसी निर्धारित कटौती का वचन नहीं दिया, उन्हें अपने के लिए अंबर बॉक्स के इस्तेमाल से वंचित कर दिया जाएगा।

दि मिनिमिस

यह घरेलू समर्थन का स्वीकृत व्यय है जिसमें कटौती की प्रतिबद्धता आवश्यक नहीं है, और न ही इसे ए एम एस की गणना में शामिल किया गया है। समग्र कृषि उत्पादन और सामग्री विशेष कार्यक्रमों, दोनों की ही सीमाएं तय कर दी गई हैं। इन सीमओं को दिमिनिस स्तर कहा जाता है। कटौती की प्रतिबद्धता से परे यह सीमा विकासशील और विकसित देशों के लिए क्रमशः 5 प्रतिशत और 10 प्रतिशत है।

ए एम एस गणना में जुड़ जाने से बचने के लिए, कार्यक्रम के कुल व्यय का दि मिनिमिस स्तर से कम होना आवश्यक है। अमेरिका के कई कार्यक्रम इस कोटि में आते हैं जबकि यूरोपीय संघ के ज्यादातर इतने खर्चीले कार्यक्रम हैं कि दि मिनिमिस की सीमाएं तोड़ देते हैं।

ब्लू बॉक्स

यह "सशर्त अंबर बॉक्स" है। इसका मकसद व्यापार की विकृति को कम करना है। ऐसे कार्यक्रम जो सामान्यतः अंबर बॉक्स में आते हैं लेकिन यदि किसानों के उत्पादन का परिसीमन भी आवश्यक बनाते हैं तो उन्हें कृषि समझौते की धारा – 6 के अंतर्गत ब्लू बॉक्स में डाल दिया जाता है। सिर्फ थोड़े ही विकासशील देश ही इस बॉक्स के कार्यक्रमों के लिए पात्रता रखते हैं।

ग्रीन बाक्स : यह प्रोग्राम उस कोटि में आता है जिसमें अनतर्राष्ट्रीय ट्रेड समझौते के तहत व्यय की कोई सीमा निर्धारित नहीं की गयी है। ग्रीन बाक्स की कोटि में आने वाले प्रोग्राम बराबर की ड्यूटी चैलेंजेज से संरक्षित हैं। ऐसा माना जाता है कि ग्रीन बाक्स में प्राप्त सहायता या छूट – व्यापार को तोड़ते–मरोड़ते नहीं या नगण्य बदलाव ही करते हैं। इनका रुझान ऐसे कार्यक्रमों की तरफ होता है जिनका लक्ष्य कोई खास उत्पाद नहीं होता और इसके अन्तर्गत ऐसे किसानों को सीधे तौर पर आय–संवर्द्धन हेतु सहायता मुहैया करायी जाती है जो मौजूदा उत्पादन स्तर या उत्पादों के उचित दाम पाने से वंचित हैं, बुनियादी सेवायें, खाद्य सुरक्षा हेतु अन्न के सार्वजनिक संग्रहण, घरेलू खाद्य सहायता, सरकार द्वारा आय सुनिश्चित कराने में आर्थिक भागेदारी, प्राकृतिक आपदा की स्थितियों में मदद, ढांचागत समायोजन हेतु सहायता, लागत हेतु मदद, रोग नियंत्रण हेतु सहायता आदि। इसे और विस्तार में संलग्नक 2 ए एग्रीमेण्ट आन एग्रीकल्चर (ए.ओ.ए.) में देखा जा सकता है।

व्यापारेत्तर सरोकार

बाजारोन्मुख कृषि व्यापार की स्थापना के कृषि समझौते के लक्ष्य के विपरीत चलने वाले सरकारी कार्यक्रमों को वैधता प्रदान करने के लिए व्यापारेतर सरोकार का प्रावधान बनाया गया। इसके तहत खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण विकास और पर्यावरण संरक्षण के कार्यक्रम आते हैं। यूरोपीय संघ ने पशु कल्याण और पर्यावरण संतुलन के कार्यक्रमों को भी समझौते के अगले संस्करण में शामिल करने का प्रस्ताव किया है।

ब्लू बॉक्स

जुलाई फ्रेमवर्क की सबसे नाटकीय बात ब्लू बॉक्स के विस्तार के नए मानकों की रचना है जिससे अमेरिका द्वारा अपने किसानों को दिए जाने वाले प्रति चक्रीय भुगतान को ब्लू बॉक्स में शामिल किया जा सके। ऐसा ब्लू बॉक्स के विस्तार के विकासशील देशों के भारी विरोध को नजरअंदाज करके किया गया। सदस्य देशों द्वारा किसानों के प्रत्यक्ष भुगतान को इसमें शामिल करने के उद्देश्य से, ब्लू बॉक्स संबंधी समझौते की धारा 6.5 की समीक्षा की जाएगी। जुलाई दस्तावेज में कहा गया है कि इसके मानदडें पर "वार्ता" की जाएगी। और यह अंबर बॉक्स की तुलना में व्यापार को कम विकृत करेगा। लेकिन दस्तावेज का मूल मकसद अमेरिकी किसानों को मिलने वाले प्रत्यक्ष सरकारी भुगतान को वैधता प्रदान करना है। फिलहाल अमेरिका के पास अभी कोई ब्यू बॉक्स नहीं है। अमेरिका ने 1996 में कृषि नीति सुधार, कृषि विधेयक की स्वतंत्रता (यू एस फार्म बिल) के समय ब्लू बॉक्स सुविधा को छोड़ दिया था। दरअसल अमेरिका कार्यक्रम परिसीमन मानदंड का प्रमुख पैरोकार है। इन्हीं मानदंडों के आधार पर सामग्री की ब्लू बॉक्स की पात्रता तय होती है। अब से ब्लू बॉक्स में प्रति चक्रीय भुगतान भी शामिल होंगे जो सामग्री का मूल्य स्तर निर्धारित करेंगे। इसका मतलब हुआ कि दाम इस स्तर से नीचे गिरा तो एक स्वचालित प्रणाली के तहत आय समर्थन घरेलू उत्पादकों को प्रति इकाई उत्पाद की दर से प्रत्यक्ष भुगतान किया जाएगा और उत्पाद की मात्रा पर कोई सीमा नहीं है।

फ्रेमवर्क में ब्लू बॉक्स पर देश के कुल कृषि उत्पाद के 5 प्रतिशत व्यय की उच्चतम सीमा प्रस्तावित है। पहले इस बॉक्स के तहत कार्यक्रमों के व्यय की कोई सीमा नहीं थी।

बॉक्स 6

विशाल और विवादित ब्लू बॉक्स को और विस्तार देने की अमेरिकी कामयाबी की कहानी

जेनेवा बैठक के दौरान अमेरिका ने विकासशील देशों का ध्यान बंटाने के लिए मांग कर दी कि वे घरेलू समर्थन के अपने दि मिनिमिस स्तर को कम करें। विकासशील देश सब्सिडी जारी रखना चाहते थे, जिसके चलते अमेरिका के सामने उन्होंने घुटने टेक दिए। अमेरिका समझौते के लिए राजी हो गया और बदले में ब्लू बॉक्स के विस्तार के लिए विकासशील देशों को राजी होना पड़ा।

अमेरिका अपने कुल कृषि उत्पाद के 5 प्रतिशत की सब्सिडी ब्लू बॉक्स में डालने की फिराक में है। अमेरिकी कृषि विधेयक 2002 के तहत वह किसानों के प्रति चक्रीय प्रत्यक्ष भुगतान की सब्सिडी ब्लू बॉक्स में हस्तांतरित कर देगा।

यूरोपीय संघ 5 प्रतिशत स्तर से अधिक की अपनी सब्सिडी के लिए पहले से ब्लू बॉक्स का इस्तेमाल करता आ रहा है। वह इसमें 14.31 अरब यूरो डालता है। लेकिन जुलाई फ्रेमवर्क यूरोपीय संघ को काफी रियायतें देता है। दस्तावेज के अनुच्छेद 15 के अनुसार, ''ऐसे मामलों में जिसमें कोई सदस्य व्यापार विकृति करने वाली सब्सिडी अत्यधिक मात्रा में ब्लू बॉक्स में डालता रहा है उसके साथ थोड़ा लचीला बर्ताव किया जाएगा, जिससे उसे सब्सिडी में एक साथ बहुत कटौती न करनी पड़े।'' यूरोपीय संघ ने ब्लू बॉक्स में काफी सब्सिडी डालने की योजना बना ली है। इस तरह ऐसी सब्सिडी जिसे अनुशासित किया जाना था, पूर्ववत जारी रह सकेगी। यह आडंबर और दोगलापन डब्लूटीओ वार्ता का अभिन्न हिस्सा है जिसमें धनी देशों की मर्जी का वर्चस्व रहता है।

ग्रीन बॉक्स – जेनेवा पैकेज में इस तरह की सब्सिडी के लिए न तो कोई सीमा निर्धारित की गई है, और न ही उनमें कटौती की प्रतिबद्धता की कोई अपेक्षा। इसमें इतना ही कहा गया है कि ''इससे व्यापार में विकास न हो या कम से कम हो'', यह सुनिश्चित करने के लिए ग्रीन बॉक्स के मानकों की समीक्षा करके स्पष्टीकरण दिया जाएगा। लेकिन इस दिशा में अभी तक कोई प्रगति दिखाई नहीं देती।

विकासशील देशों को इसके निहितार्थ मालूम नहीं थे इसलिए मर्राकश में उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया। अब इसके खतरनाक दुष्परिणाम उजागर हो गए हैं। इसमें समाहित भारी भरकम सब्सिडी ने अंतर्राष्ट्रीय बाजार को करारा झटका दिया। अलग–अलग कार्यक्रमों के जरिए कृषि पर भारी व्यय अकुशल कृषि उत्पादकों को बाजार में बनाए रखना है और देशों को गंभीर दुष्परिणाम भुगतने पड़ते हैं। कहा तो जाता है कि बाजार विकृति में इनका योगदान ज्यादा नहीं है लेकिन आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन का मानना है कि इस तरह के भुगतानों का उत्पादन पर प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी है। इसके आलावा साझी कृषि नीति वाले यूरोपीय संघ और अमेरिका समेत ज्यादातर विकसित देशों ने अपनी सब्सिडियों के ग्रीन बॉक्स में हंस्तांतरण की प्रक्रिया शुरू कर दी है और अपने अन्य बॉक्सों की सब्सिडी में कटौती के लिए तैयार हैं। इस स्थिति में ग्रीन

बॉक्स पर यदि कोई रोक न लगाई गई तो जो भी अधिकार विकासशील देशों ने हासिल किए हैं, सब निरर्थक हो जाएंगे।

अंबर बॉक्स – जेनेवा बैठक में व्यापार विकृत करने वाली सभी घरेलू समर्थनों के औसत स्तर में पर्याप्त कटौती का फैसला लिया गया। अंबर बॉक्स त्रिस्तरीय सूत्र के आधार पर बाजार विकृत करने वाली सब्सिडियों के आधार स्तर में कटौती की जाएगी। अंबर बॉक्स की सब्सिडियों में कम से कम 20 प्रतिशत सालाना कटौती की जाएगी। इसके अलावा इस बॉक्स के उत्पाद केंद्रित समर्थन को सीमित किया जाएगा। (भारत के पास अंबर बॉक्स नहीं है।)

डी मिनिमिस (न्यूनतम) –

यह फ्रेमवर्क न्यूनतम की बात करता है। इस स्तर पर किसी प्रकार की कटौती की प्रतिबद्धता नहीं होगी जो अभी विकासशील देशों के लिए 5 प्रतिशत तथा विकसित देशों के लिए 10 प्रतिशत है।

गरीब किसानों की आजीविका और उनके संसाधनों के विकास के लिए आबंटित लगभग सभी न्यूनतम समर्थन कटौती की शर्त से मुक्त होंगे। यह विकासशील देशों के लिए कोई बड़ी जीत नहीं है। इसमें कई किंतु परंतु लगे हैं। यह 'साबित' करना कि न्यूनतम के अंतर्गत समर्थन कार्यक्रम 'गरीब किसानों की आजीविका और संसाधनों' के विकास के लिए है, असंभव सा है।

2451
22/4/09

विकासशील देशों ने क्या खोया ?

इस तरह हम देखते हैं कि जेनेवा के फैसले से कृषि उद्योग के घरेलू समर्थन की स्थिति कुल मिलाकर लगभग जस की तस बनी रही। दरअसल, जेनेवा पैकेज में अंतर्निहित लचीलेपन के चलते, समर्थन स्तर में वृद्धि की संभावनाएं बढ़ गई हैं, क्योंकि ग्रीन बॉक्स के समर्थन पर लगाम लगाने के प्रावधान नहीं हैं और कटौती की प्रतिबद्धताओं के लिए मौजूदा 'असीमित व्यय स्तर' को आधार मान लिया गया है। कटौती की गणना के लिए सीमित, स्वीकृत या मौजूदा समर्थन स्तर में से किसी को भी आधार मानने की छूट ने यूरोपीय संघ और अमेरिका को कृषि सब्सिडी बढ़ाने का सुनहरा अवसर प्रदान कर दिया। क्योंकि सब्सिडी में कटौती की पहली किश्त की गणना सब्सिडी के मौजूदा स्तर पर आधारित न होकर तीन घटकों पर आधारित होगीः अंतिम स्थिर योग एएमएस + स्वीकृत न्यूनतम + ब्लू बॉक्स।

बॉक्स 7

यूरोपीय संघ द्वारा धन के आतंक का प्रदर्शन

- यूरोपीय संघ की कुल मौजूदा सब्सिडी (अविज्ञापित युग्म समर्थन सहित) लगभग 55.8 अरब यूरो है।
- सब्सिडी का मौजूदा स्तर, यानि अंतिम निर्धारित योग ए एम एस + स्वीकृत न्यूनतम + ब्लू बॉक्स सहित 'सकल समर्थन स्तर' 95.76 अरब यूरो है।
- फ्रेमवर्क में प्रस्तावित कटौती के तहत कुल घरेलू समर्थन 76.63 अरब यूरो हो जाएगा। गौरतलब है कि यह राशि कृषि व्यापार और बड़े-बड़े किसानों को दी जाने वाली भारी भरकम मौजूदा सब्सिडी से भी अधिक है।

इसीलिए धनी देशों की धूर्तता का पर्दाफाश आवश्यक है। वे अपने प्रभाव और चालबाजियों से अपने व्यापारिक और राजनैतिक हितों के प्रोत्साहन के कार्यक्रमों को वैध बना लेते हैं और दिनोदिन दरिद्र होते जा रहे विकासशील देशों के किसानों को मिलने वाली थोड़ी बहुत सब्सिडी भी उनकी आंखों की किरकिरी बनी हुई है, उसे वे येन केन प्रकारेण बंद करवा देना चाहते हैं।

शब्दों और कारकों के चुनाव में चालाकी के जरिए, प्रस्तावित फ्रेमवर्क में अमेरिका और यूरोपीय संघ की सब्सिडी के उच्च स्तर को बरकरार रखने के पेचीदे उपाय किए गए हैं जबकि कर के नए फार्मूले के तहत विकासशील देशों को अपना कृषि बाजार खोल देने को बाध्य किया जाएगा।

इन सबसे विकासशील देशों के बाजारों में आयातित कृषि सामग्रियों की मौजूदा भरमार बरकरार रहेगी और बढ़ भी सकती है। इस प्रक्रिया से दुनिया भर के किसान, खासकर छोटे किसान और भी तबाह हो जाएंगे।

निर्यात समर्थन – भारत के सरोकार से परे

विकासशील देश एक 'खास तिथि' तक सभी तरह की सब्सिडी समाप्त करने को राजी हैं, लेकिन वह खास तिथि अभी तक परिभाषित नहीं की गई है। किसी अंतिम समय सीमा के निर्धारण के बिना विकसित देशों के वायदे खोखले हैं। निर्यात सब्सिडी में भारत को मिली छूट का कोई मतलब इसलिए नहीं है कि इसकी निर्यात सब्सिडी या निर्यात नगण्य है। इसकी गणना प्रमुख कृषि निर्यातक देशों में नहीं होती।

विकसित देशों ने निर्यात सब्सिडी में कटौती का कोई वायदा नहीं किया जबकि भारत अपने निर्यात करों में कटौती के लिए आसानी से राजी हो गया।

बाजार सुलभता – संकटपूर्ण भविष्य की चेतावनी

भारत में 250 फसलों की खेती होती है और अमेरिका में पच्चीस। इनमें से अपने कुछ उत्पादों को 'संवेदनशील उत्पाद' की कोटि में शामिल कराना अमेरिका के लिए मुश्किल नहीं होगा। व्यापार मंत्रालय का दावा है कि समुचित संख्या में उत्पादों को 'विशेष उत्पाद' की कोटि में रखकर उनके बाजार की विदेशी सामग्रियों की भरमार से बचाया जा सकेगा। लेकिन 250 उत्पादों में से किस किस को 'विशेष उत्पाद' की कोटि में डाले, भारत जैसे देश के लिए यह तय कर पाना मुश्किल होगा।

अमेरिका, कनाडा, यूरोपीय संघ और जापान चीनी, चावल, दुग्ध उत्पाद, मांस, मछली, फल, सब्जी जैसी खाद्य–सामग्रियों पर 35–900 प्रतिशत तक का कर लगाते हैं और आसानी से उन्हें 'संवेदनशील उत्पाद' की कोटि में डाल देते हैं। टैरिफ रेट कोटा के तहत 25–40 उत्पादों को 'संवेदनशील उत्पाद कर प्रणाली' का लाभ उपलब्ध कराया जा सकता है।

उरूग्वे दौर ने विकासशील देशों को औसतन 24 प्रतिशत और प्रत्येक कर प्रणाली में कम से कम 10 प्रतिशत कटौती का दिशा निर्देश दिया था। जेनेवा बैठक में एक समान बर्ताव का फैसला हुआ और करों में कटौती का एक बहुस्तरीय फार्मूला प्रस्तावित किया गया है। इस फार्मूले के तहत 'संवेदनशील उत्पादों के साथ नरमी बरतते हुए, अत्यधिक करों में सबसे अधिक और कम करों में सबसे कम कटौती प्रस्तावित है। विकासशील देशों के लिए विशेष और भिन्न बर्ताव का प्रावधान किया गया है लेकिन उन पर भी बहुस्तरीय फार्मूला लागू होगा। इसका मतलब हुआ कि जिन उत्पादों पर कर जितना ज्यादा है उनमें कटौती का अनुपात भी उतना ही ज्यादा होगा। भविष्य ही बताएगा कि विशेष उत्पाद और एसएसएम के उपायों के प्रावधानों से स्थिति की दयनीयता कुछ कम होती है या नहीं।

बॉक्स 8

विकास के विविध स्तरों को देखते हुए, विशेष एवं भिन्न बर्ताव का प्रावधान मूल रूप से विकासशील देशों के लिए बना । इसके चलते विकासशील देश कुछ रियायतें हासिल कर सकेंगे। इस प्रावधान को ठीक से लागू करने की बजाय जुलाई फ्रेमवर्क अमीर देशों द्वारा इस प्रावधान के इस्तेमाल को वैधता प्रदान करता है। विशेष एवं भिन्न बर्ताव के हवाले से विकासशील देशों को बाध्य किया जा रहा है कि वे अपने किसानों की मदद करना बंद कर दें।

यह प्रावधान ध्यान बंटाने के लिए लाया गया है क्योंकि विकसित देश तमाम तरीकों से हर साल करोड़ों डॉलर की कृषि सब्सिडी से अंतरराष्ट्रीय कृषि के बाजार भाव में कृत्रिम गिरावट पैदा करते हैं। व्यापार मंत्रालय को लगता है कि भारत में कृषि उत्पादों पर कर दर काफी ऊंचा है इसलिए इसकी खेती सुरक्षित है। लेकिन जब तक 'न्यूनतम कटौती' को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया जाता हिंदुस्तान के किसानों के सिर पर खतरा मंडराता रहेगा।

इस विसंगत सौदेबाजी में भारत ने तो अपना कृषि बाजार अमेरिकी उत्पादों के लिए खोल दिया लेकिन अमेरिका ने अभी तक नहीं बताया कि वह अपनी सब्सिडी कब बंद करेगा। पिछले एक दशक में विकासशील देश करो में कटौती और कोटा प्रतिबंध में ढील की डब्लूटीओ की शर्ते लागू कर चुके हैं।

विकासशील देशों के पास उत्तर के अत्याचार से बचने के यही औजार थे, जो अब नहीं रहे।

चक्करदार डिब्बों की भूलभुलैया

भारत ने व्यापार विकृत करने वाली सब्सिडियों को ब्लूबॉक्स में हस्तांतरित करने की अमेरिका की मांग मान ली है। ब्लू बॉक्स सब्सिडी अमेरिकी किसानों को उत्पादन स्तर निर्धारित सीमा तक ले जाने को प्रोत्साहित करता है। अमेरिका द्वारा अपने किसानों को सब्सिडी देना जारी है, बस उसने तरीका बदल लिया है। अब वह सीधे–सीधे सब्सिडी न देकर ब्लू बॉक्स के मार्फत देगा।

अमीर देशों ने कहा कि पहले ही साल में वे सब्सिडी में 20 प्रतिशत कटौती कर देंगे। विकासशील देशों को कहा गया कि वे 'संसाधन विहीन गरीब' किसानों को दी जाने वाली एमएसपी में कटौती करें। इसका कोई मतलब इसलिए नहीं है कि भारत में सारी सब्सिडी किसानों को ही मिलती है। यह साबित कर पाना कि इसके कितने किसान गरीब हैं, भारत के लिए टेढ़ी खीर होगी। दरअसल, चालाकी से निर्मित जुलाई फ्रेमवर्क के प्रावधान उत्तरीगोलार्ध के देशों की सब्सिडी में विस्तार के लिए बनाए गए हैं। ब्लू बॉक्स को समाप्त करने के लिए विकासशील देशों के सारे प्रयास निरस्त कर दिए गए। नए फ्रेमवर्क में अमीर देशों के लिए अपनी ग्रीन बॉक्स और अंबर बॉक्स की सब्सिडी ब्लू बॉक्स में हस्तांतरित करने की पूरी गुंजाइश रखी गई है। शांति अनुच्छेद की समाप्ति के चलते विकासशील देशों द्वारा हासिल की गई उपलब्धि भी निरस्त हो जाएगी। अब उन्हें उससे भी खतरनाक ब्लू बॉक्स से जूझना है। भारत ने पाया कम खोया ज्यादा है। अमेरिका और यूरोपीय संघ को ठोस फायदे हुए जबकि भारत की रियायतें अभी भी विचाराधीन हैं।

जुलाई फ्रेमवर्क के संभावित परिणाम

विकासशील देशों के बाजारों को सस्ते उत्पादों से पाटने की अमीर देशों की कारगुजारियों में बढ़ोत्तरी

उत्पादन व्यय से कम दाम में उत्पादों को बेचना 'डंपिंग' है। वार्ताओं के मौजूदा दौर में एक उचित और बाजारोन्मुख व्यापार प्रणाली की स्थापना में डंपिंग सबसे बड़ी बाधा है। इससे पीड़ित देशों के लिए जुलाई फ्रेमवर्क में किसी भी राहत का कोई प्रावधान नहीं है। दरअसल, इस पैकेज में निर्यात सब्सिडी के प्रावधानों की गोल मटोल भाषा अमीर देशों को सब्सिडी जारी रखने और बढ़ाने की पूरी गुंजाइश प्रदान करती है। गौरतलब है कि इन देशों की सब्सिडी खत्म करने की प्रतिबद्धता भी गोल–मटोल भाषा में ही व्यक्त की गई है। सीएजी और अमेरिकी कृषि विधेयक तथा विस्तारित ब्लू बॉक्स में 100 अरब डॉलर से अधिक की सब्सिडी समा जाती है जो कि बहुपक्षीय व्यापार के आदर्शों के विपरीत है और इससे 'डंपिंग' की समस्या और भी भयावह हो जाती है।

इस पूरे प्रकरण पर एक समीक्षात्मक दृष्टिपात से स्पष्ट हो जाता है कि कृषि उत्पादों की 'डंपिंग' में अमेरिका और यूरोपीय संघ सबसे आगे है। उन्हें इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि उनके इस कृत्य से विकासशील देशों की ग्रामीण अर्थव्यवस्थाएं नष्ट हो जाएंगी, खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी, भुगतान संतुलन असंतुलित हो जाएगा, दुनिया भर के करोड़ों किसान हताशा के शिकार हो जाएंगे और इस तरह इन देशों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएं तबाह हो जाएंगी।

निम्न तालिका अमेरिका द्वारा अंतरराष्ट्रीय बाजार में खाद्य उत्पादों की 'डंपिंग' के आंकड़े दर्शाती है:

तालिका–1 : निर्यात के क्षेत्र में अमेरिका द्वारा डंपिंग

कृषि उत्पाद	कुल मूल्य (यू.एस.डॉ.)	निर्यात मूल्य (यू.एस.डॉ.)	निर्यात का प्रतिशत
गेहूं	6.24	3.5	44
सोयाबीन	6.98	4.93	29
बाजरा	3.37	2.98	12
कपास	0.9313	0.3968	57
चावल	18.66	14.55	22

स्रोत : यूनाइटेड स्टैट्स डेवलपमेंट एजेंसी)

यू.एस. डेवलपमेंट एजेंसी के आंकड़ें बताते हैं कि अमेरिका द्वारा गेहूं, बाजरा, कपास और चावल की 'डंपिंग' का स्तर लगातार बढ़ रहा है। इससे पता चलता है कि बाजार की विकृति को कम करने के प्रति अमेरिकी प्रतिबद्धता एक छलावा है। दरअसल, अमेरिका एवं अन्य अमीर देशों द्वारा डंपिंग के चलते ऐसे हालात बन गए हैं कि कृषि उत्पादों के अंतरराष्ट्रीय बाजार मूल्य से अमेरिका या भारत कहीं का भी किसान ठीक से अपनी आजीविका नहीं चला सकता। इससे पता चलता है कि अमीर देश 'डंपिंग' का इस्तेमाल, विकासशील देशों पर प्रभुत्व बरकरार रखने के रणनीतिक हथियार के रूप में भी करते हैं। अंतरराष्ट्रीय बाजार में मूल्य की गिरावट की मार से अपने कपास उत्पादकों को अमेरिका करोड़ों डॉलर की सहायता देता है लेकिन अपने उत्पादों को अंतरराष्ट्रीय बाजार में लागत से कम दाम पर 'डंप' करने से बाज़ नहीं आता। 2001 में अमेरिका द्वारा 'डंपिंग' का स्तर 57 प्रतिशत तक पहुंच गया।

बॉक्स – 9

डंपिंग – एक घोषित नीति !

निर्यात बाजारों के विकास के लिए अमेरिका का एक विशेष कार्यक्रम है – निर्यात विस्तार कार्यक्रम (एक्सपोर्ट एक्सपैंशन प्रोग्राम – ईईपी)। इस कार्यक्रम के तहत अमेरिकी सरकार कृषि निर्यातकों को, सरकारी उपभोक्ता ऋण निगम के अंतर्गत आने वाली सामग्रियों को कुछ चुने हुए देशों में घरेलू बाजार से काफी कम दाम पर बेचने के लिए अधिकृत करती है। अमेरिका के 2002 के कृषि विधेयक में इस उद्देश्य के लिए 47.8 करोड़ डॉलर का प्रावधान किया गया है, जो डंपिंग नहीं तो और क्या है ?

उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट है कि विकसित देश 'डंपिंग' का इस्तेमाल एक मारक हथियार के रूप में करते हैं। इनमें से कई अंतरराष्ट्रीय बाजार के मूल्य में कृत्रिम कमी करके किसानों को होने वाले घाटे की भरपाई करने में सक्षम हैं।

डंपिंग से तबाह होती राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएं :

डंपिंग ने कई देशों के किसानों को चारों खाने चित कर दिया। कम दाम की आयातित सामग्रियों से बाजार पाट दिए जाते हैं। और स्थानीय और क्षेत्रीय बाजारों से उनकी छुट्टी हो जाती है। ज्यादातर विकासशील देशों में सामाजिक सुरक्षा के किसी तंत्र की व्यवस्था नहीं है। सामाजिक सुरक्षा तंत्र के अभाव में ये किसान खेती करना बंद कर देंगे, क्योंकि खेती से जीवन निर्वाह बहुत ही मुश्किल हो जाएगा। अगर 'डंपिंग' का कहर इसी तरह बरसता रहा तो कुछ ही सालों में अतिरिक्त खाद्य सामग्री के उत्पादक देश भूख की समस्या के जाल में फंस जाएंगे।

बॉक्स 10

जिंबाब्वे : इफरात से बदहाली तक

अस्सी के दशक के पूर्वार्ध में मूल्य समर्थन के चलते जिंबाब्वे में बाजरा के उत्पादन में तीन गुना बढ़ोत्तरी हुई। 1989 तक आते आते जिंबाब्वे अपने घरेलू खपत से 150 लाख टन अधिक बाजरा पैदा करने लगा। खाद्य सामग्री के घाटे को पूरा करने के लिए यह मलावी और मोजाँबीक जैसे पड़ोसी देशों को बाजरे का निर्यात करने लगा। लेकिन इसके बाद हालात बद से बदतर हो गए। उच्च सब्सिडी वाले अमेरिकी उत्पाद की डंपिंग और खाद्य सहायता के चलते इसके दामों में भारी गिरावट आ गई। बाजरे का मूल्य कम करना पड़ा और सरकारी भंडारण पर रोक लगानी पड़ी इस दौरान कई किसानों ने खेती का धंधा छोड़ दिया। 1992 में बाजरे के उत्पादन में 75 प्रतिशत गिरावट आई और जहां इफरात थी वहां बदहाली आ गई। देश में 140 लाख टन खाद्यान्न की कमी हो गई।

वर्तमान में जिम्बाब्वे विश्व खाद्य कार्यक्रम में बना हुआ है। इस कार्यक्रम के 'खाद्य–सहायता' के तहत अमरीका आसानी से अपने जीन संबंधित खाद्यान्नों की डंपिंग करता है।

बॉक्स 11

'डंपिंग' का दुश्चक्र

कृषि उत्पादों की 'डंपिंग'	किसानों की असमर्थता घरेलू बाजार के दरवाजे उनके लिए बंद
खाद्यान्न के लिए विदेशी समर्थन	कृषि आय में कमी, गैर–कृषि आय में बढ़ोत्तरी। पिछले वर्षों में किसानों पर ज्यादा निर्भरता ने खेती छोड़ दी–बेच दी, पलायन कर गए, नौकरियां कर लीं।

डंपिंग का दुश्चक्र

विदेशी मुद्रा का बेतहाशा पलायन (पेट्रोलियम जैसे किसी सामरिक महत्व के उत्पाद के अभाव में आयात के लिए अधिक धन की आवश्यकता)। विश्व बैंक, एडीबी, जेआईसीए जैसे वित्तीय संस्थानों से ज्यादा कर्ज)

डंप फूड पर बढ़ती निर्भरता/खाद्य सुरक्षा को खतरा/घटती प्रभुता, मध्यावधि खाद्यान्न घाटा आम हुआ।

राष्ट्रीय सरकारें डंपिंग करने वाले देशों की शर्तें मानने पर बाध्य। रणनीतिक फैसले (सेना, नीतिगत मामले) स्वतंत्र रूप से न ले पाने की मजबूरी।

राष्ट्रों का वार्षिक खाद्य सहायता प्राप्त करने वाले देशों के रूप में बदलना। जैसे, सोमालिया, बुरकिना फासो आदि।

● महाबलियों की जुगल जोड़ी अमेरिका और यूरोपीय संघ ने डब्लूटीओ के विवाद न्यायाधिकरण के फैसले को धता बता दिया !

यूरोपीय संघ और अमेरिका 'समरथ को नहीं दोष' के सिद्धांत पर लगातार डब्लूटीओ कानूनों की अवमानना करते आ रहे हैं। विवाद निवारण न्यायालय के जो फैसले बाध्यकारी होते हैं, अपने को जांच और समीक्षा से परे करके उन्हें ये धता बता देते हैं। कपास अमेरिका की अनुचित सब्सिडी का प्रतीक है और चीनी यूरोप की।

ब्राजील और भारत, थाईलैंड, आस्ट्रेलिया जैसे कई अन्य देशों ने विवाद निवारण न्यायालय में दोनों मामले अलग-अलग उठाए। न्यायालय ने अमेरिका और यूरोपीय संघ को अति उत्पादन का दोषी पाया। अतिरिक्त उत्पाद अंतरराष्ट्रीय बाजार में डंप कर दिया गया।

परिणामस्वरूप इन दोनों सामग्रियों की भूमंडलीय दर में काफी गिरावट आ गई। कपास और चीनी दोनों ही मामलों में न्यायालय ने सब्सिडी के खिलाफ फैसला दिया। दोनों ने ही न्यायालय के फैसले को मानने से इंकार कर दिया।

अकेले पश्चिम अफ्रीका में ही 1 करोड़ लोगों की आजीविका कपास पर निर्भर है। अमेरिका ने कपास की 'डंपिंग' से अंतरराष्ट्रीय बाजार भाव गिराकर इन किसानों को भुखमरी की कगार पर पहुंचा दिया। डब्लूटीओ पैनल ने पाया कि अमेरिका ने डब्लूटीओ नियमों को धता बताकर, 3.2 अरब की कपास सब्सिडी और 1.6 अरब निर्यात ऋण दिया। इसमें 2002 में अमेरिका की सारी कपास सब्सिडी और 50 प्रतिशत के आसपास का निर्यात ऋण शामिल है। इसी तरह यूरोपीय संघ द्वारा 27 लाख टन चीनी की 'डंपिंग' डब्लूटीओ नियमों का उल्लंघन है। यूरोपीय संघ द्वारा सब्सिडी वाली चीनी का निर्यात इसकी स्वीकृत निर्यात सीमा लांघ जाता है। ऑक्सफैम के एक अध्ययन के अनुसार, 2002 में यूरोपीय संघ की डंपिंग से ब्राजील को 49.4 करोड़ थाईलैंड को 15.1 करोड़ और दक्षिण अफ्रीका को 6 करोड़ डॉलर के विदेशी मुद्रा का नुकसान उठाना पड़ा। गौरतलब है कि इन देशों में करोड़ों किसानों की आजीविका गन्ने की खेती पर निर्भर है।

विकसित दुनिया में बाहरी प्रतिस्पर्धा पर वस्तुतः रोक

जेनेवा पैकेज वस्तुतः विकसित देशों के निहित स्वार्थों को वैधता प्रदान करता है। वे अब किसी रोक टोक के बिना अपने व्यापार का विस्तार कर सकते हैं।

जी–5 ने शुल्क में कटौती के लिए विकासशील देशों को तो राजी कर लिया लेकिन अपनी तरफ से किसी भी प्रतिबद्धता से बचा रहा। इतना ही नहीं, अपने घरेलू बाजारों में आयात रोकने में भी वे कामयाब रहे। करों में कटौती से कई देश प्रतिस्पर्धा में आ जाते हैं।

बॉक्स 12

करों में कटौती ने इंडोनेशिया के किसानों को खेती से बेदखल कर दिया

1998 में इंडोनेशिया पूर्व एशियाई संकट से ग्रस्त था। आई एम एफ ने इस संकट से उबारने की उत्सुकता दिखायी। आई एम एफ ने कृषि सुधार ऋण के रूप में इसे 45 बुशेल डालर का ऋण दिया। उसे यह ऋण चावल और चीनी को कर मुक्त कर देने की शर्त पर दिया गया। गौरतलब है कि इंडोनेशिया के प्रमुख कृषि उत्पाद चावल और चीनी ही हैं। इसके घरेलू बाजार सब्सिडी युक्त, सस्ते, आयातित चीनी और चावल से पट गए। वहां के किसान बाजार से बाहर होने लगे। दो ही साल में 42,000 मझोले और छोटे किसान खेती छोड़ आजीविका की तलाश में अन्यत्र जाने को बाध्य हो गए। इस तरह आईएमएफ के इस 'संकटमोचक' रवैये से किसान खेती से बेदखल हो गए।

विदेशी बाजारों में अपने व्यापार के असीम विस्तार में जुटे विकसित देश, उच्चकरों और समर्थन के बल पर अपने बाजारों को संरक्षित किए हुए हैं। इसके लिए वे अपने किसानों और कृषि व्यापारियों की सेवा में अकूत धन झोंकते हैं। कृषि व्यापार में इस दादागिरी के लिए उन्होंने कई उपाय किए। विकसित और विकासशील देशों के एक समान इस्तेमाल के लिए 'संवेदनशील उत्पाद' की कोटि बनाई गई, लेकिन निर्यात सब्सिडी, बाजार की सुलभता और ब्लूबॉक्स तथा ग्रीन बॉक्स के जादुई आकार पर प्रतिबद्धता का कोई प्रावधान नहीं किया गया। 'संवेदनशील उत्पादों' पर नरमी के साथ 'उच्च करों में ज्यादा कटौती' इस वक्तव्य का तार्किक आशय है, विकसित देशों के बाजारों में वहां इफरात में पैदा होने वाले उत्पादों के आयात पर वास्तविक रोक। निर्यात सब्सिडी में कटौती की किसी ठोस प्रतिबद्धता के अभाव और अपने बाजारों की सुलभता पर रोक के उपायों की वैधता हासिल करके विकसित देशों की चांदी हो गई। बिना एक इंच भी टस से मस हुए उन्होंने जो भी चाहा, हासिल कर लिया।

भाग — II

इस भाग में यह बताने का प्रयास किया गया है कि वास्तव में वह कौन सी शक्तियां हैं जो परदे के पीछे सक्रिय रहकर (एग्रीमेण्ट आन एग्रीकल्चर या एआोए), डब्ल्यू.टी.ओ. के प्रत्येक कदम तथा निर्णय को तय कराती हैं। ये शक्तियां कृषि व्यापार में प्रभुत्व रखती हैं तथा कृषि को किसानों के हाथ से छीनकर पूरी खाद्य आपूर्ति की श्रृंखला पर एकाधिकार जमाना चाहती हैं। दक्षिणी देशों के किसान अब गंभीर खतरे में हैं। परेशान करने वाली बात यह है कि भारी तादाद में किसान शहरों की तरफ पलायन कर रहे हैं। आत्महत्याओं की घटनायें केवल भारत तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि यह स्थिति एशिया, अफ्रीका, कैरिबियन देश एवं दक्षिण अमेरिका तक में है। ग्रामीण जीविका तथा अर्थव्यवस्था के हालात को डब्ल्यू.टी.ओ. के संदर्भ में देखना तथा समझना जरूरी है। यह हमारी सबसे बड़ी भूल होगी यदि हम डब्ल्यू.टी.ओ. कृषि समझौतों को एक स्वतंत्र तथा अलग प्रक्रिया मान रहे हैं। वास्तव में यह व्यापक स्तर पर चल रही प्रक्रियाओं का ही हिस्सा है जिसका संचालन कृषि व्यापार के बड़े दानव कर रहे हैं। इस संदर्भ में कृषि व्यापार के हितों को समझे बगैर इसका संभाव्य हल ढूंढ़ पाना हमारे लिए असंभव होगा — जिसका परिणाम होगा व्यापार की असमान शर्तों का थोपा जाना तथा करोड़ों करोड़ किसानों की स्वतन्त्रता तथा स्थायित्व का खात्मा। डब्ल्यू.टी.ओ. समझौता वार्ता में कृषि व्यापार के दानवों का जी 5 समूह पर पूरा का पूरा प्रभाव रहा है और है। ये अपने प्रभाव से निर्णय करवा लेते हैं। बाहर इनके हित के लिए भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, अफसरशाहों, शिक्षाविदों और विद्वानों का कॉकस काम करता है। यह कॉकस अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए कृषि व्यापार का समर्थन करता है। यह कॉकस इस कृषि व्यापार को न्यायसंगत तथा मानवीय सिद्ध करता है।

दक्षिणी देशों में इन कंपनियों के सामने सबसे बड़ा संकट यह है कि मौजूदा

समय में इन देशों में कृषि लोगों के नियंत्रण में है– करोड़ों मध्यम तथा छोटे किसानों के हाथ में। कृषि उत्पादों के उपनिवेशीकरण, पेटेंट (टी.आर.आई.पी.एस. के अन्तर्गत) – किसानों से थोक में खरीदकर (समझौते के तहत) तथा कृषि व्यापार के तहत अन्तिम रूप से इसे बेचकर जो स्थितियां खड़ी होंगी वहां पर जैव विविधता – जिससे किसानों को चुनने या न चुनने की आजादी है – कत्ल कर दी जायेगी। उत्पादों पर किसानों का नियंत्रण समाप्त हो जायेगा। इससे जनहित में चलने वाली सार्वजनिक वितरण प्रणाली, एफ.सी.आई., मार्केटिंग एक्ट, भूमि सीलिंग एक्ट को समाप्त करके एक ऐसे ढांचे–कानूनों का निर्माण किया जायेगा, जो कृषि व्यापार के हित में होगा।

एक व्यापक सोच अनिवार्य है जिससे हम अपनी भूमिका तय कर पायें, एक प्रभावकारी रणनीति बना सकें जिससे कि विश्व व्यापार संगठन के अन्दर तथा बाहर चलने वाली प्रक्रियाओं को हम चुनौती दे सकें।

कृषि व्यापार – किसके दिमाग की उपज ?

"अपनी राजनीतिक पहुंच के चलते कृशि व्यापार की बड़ी कंपनियों ने अमेरिकी विकास एजेंसी को अपने चहेतों से भर दिया। वे ऐसे लोगों को नियुक्त कराने में कामयाब रहीं जो या तो कृशि उद्योग में काम कर चुके हैं, उनके लिए भाोध करते रहे हैं या फिर उनके प्रोत्साहन में समर्थन जुटाने में सक्रिय रहे हैं। यू एस डी ए के ये अधिकारी इसके नियंत्रणकारी लक्ष्य की अनदेखी करके कृशि व्यापार की कंपनियों के हित संवर्धन की नीतियां लागू कर रहे हैं।"

–फिलिप मत्तेरा, यू एस डी ए के उद्योग विश्लेषक (2004)

डब्लूटीओ, सरकारों और कृषि व्यापार की कंपनियों का रिश्ता अब एक खुला रहस्य है। उनकी पारस्परिक प्रशंसा और चाटुकारिता की पर्याप्त सार्वजनिक आलोचना और निंदा हो चुकी है। वे निर्धारित कृषि नीतियों के मकसद पर सवालिया निशान लगाते हैं। नीतियों का मकसद जनकल्याण होना चाहिए या कृषि व्यापार के दानवाकार कारपोरेट कंपनियों का मुनाफा और वर्चस्व ? पिछले एक दशक का अनुभव और जारी प्रक्रियाएं बताती हैं कि ये नीतियां किसानों के हितों की कीमत पर बड़ी–बड़ी कंपनियों की झोली भरने में मददगार रही हैं। ऐसे में दुनिया की सात सबसे बड़ी कंपनियों का कृषि व्यापार में होना आश्चर्यजनक नहीं है। कृषि व्यापार की रणनीतियों की समझ के डब्लूटीओ वार्ताओं की समीक्षा से आंशिक सच्चाई का ही पता चलता है। इसके अलावा डब्लूटीओ कृषि समझौते की नीतियों एवं उसके निहितार्थों की गोल मोल और भ्रामक भाषा के चलते उन्हें समझना मुश्किल हैं। और इसीलिए उनके विरोध की रणनीति बनाना भी कठिन है।

बॉक्स 13

भोजन श्रृंखला का उपनिवेशीकरण

'जिन्हें भी खाद्यान्न खरीदना है, उन्हें हमारे पास आना ही पड़ेगा। और कोई विकल्प ही नहीं है।''

– बॉब कोलमेयर, कारगिल कारपोरेशन के पूर्व मैनेजर

''हम आपकी रोटी का आटा, आपके नूडल्स का गेहूं और आपके पकवान का नमक हैं। हम हैं आपके व्यंजन में अनाज, मिष्ठाहार में चॉकलेट और शीतलपेय में मिठास। तेल हैं हम आपकी सलाद के और आपके डिनर के गोमांस, सूअर और मुर्गा। हम कपास हैं आपके वस्त्र में, फर्द आपके कारपेट के और खाद आपके खेत में।''

खाद्यान्न की बहुराष्ट्रीय कंपनी कारगिल का कारपोरेट ब्रोशर 2001

क) अदृश्य हाथ !

उरूग्वे दौर तक कृषि समझौते के मसौदे की तैयारी का जिम्मा कृषि व्यापार की विशालकाय बहुराष्ट्रीय कंपनी, कारगिल के पास था। इससे ''व्यापार को ज्यादा न्यायपूर्ण और गरीबों के लिए लाभकर बनाने'' का इसका दावा संदेहास्पद लगता है। कार्गिल के भूतपूर्व उपाध्यक्ष फिलहाल यूएसटीआर कार्यालय में कार्यरत, डान अम्स्टुट्स को उस प्रस्ताव के निर्माण का श्रेय है जो बाद में डब्लूटीओ का कृषि समझौता (एओए) बन गया।

इतिहास में पहली बार कृषि व्यापार का मुद्दा बनी है। कृषि उत्पादों को भी कारखाने में तैयार होने वाले टायर या जूते जैसी सामग्रियों की ही तरह व्यापारिक वस्तु बना दिया गया और इस पर भी उसी तरह के व्यापारिक मानदंड लागू किए जाने लगे।

ख). पैसे का खेल

ज्यादातर औद्योगिक देशों में, एक खास समय में एक खास क्षेत्र की तूती बोलती है, जिसकी गूंज संसद तक पहुंचती है और उस क्षेत्र के लिए नए कानून बनते हैं। अमेरिका में चुनाव के समय निहित स्वार्थों की मिलीभगत उजागर होती है। 1996 में कृषि विधेयक पारित होने के पहले कृषि व्यापार की कंपनियों

का चुनावों में योगदान उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया।

तालिका–2 : क्या कृषि व्यापार की अमेरिकी चुनावों में भूमिका है ?

कृषि व्यापार उद्योग	1996 के चुनावों में चंदा	1994 के चुनावों में चंदा
खाद्य परिष्करण और विक्रय	10,571,149 डॉलर	(6,851622 डॉलर)
दुग्ध उद्योग	10,581,141 डॉलर	(2,267,592 डॉलर)
चीनी	3,510,923 डॉलर	(2,390,971 डॉलर)
फल एवं सब्जी	2,172,340 डॉलर	(1,580,196 डॉलर)

उपरोक्त कृषि विधेयक में कृषि व्यापारिक कंपनियों के हितों का विशेष ध्यान रखा गया है। सारी शक्ति उन्हीं के हाथों में केंद्रित कर दी गई हैं। जुलाई फ्रेमवर्क की मार्फत सरकार ने सारी तयशुदा राशि को विस्तारित ब्लू बॉक्स में हस्तांतरित कर दिया। इस धन का 61 प्रतिशत बड़े बड़े 15 प्रतिशत औद्योगिक फार्मों के खाते में गया। यह अमेरिका के इस आडंबर का पर्दाफाश करता है कि इसका इरादा किसानों को विश्वास दिलाना है कि वे सार्वजनिक प्रतिबद्धता और निजी मुनाफे के द्वंद्व में है और यह कि बहुराष्ट्रीय कंपनियां ही बेड़ा पार लगाएंगी।

ग). ट्रिप्स किसके लिए ?

यह सर्वविदित है कि अपने हित में ट्रिप्स का मसौदा तैयार करने के लिए गैर वार्ताकारों पर दबाव बनाने में दुपोंट, फिज़र, जी ई हेवलेट पकार्ड जैसी अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियों में मोन्सान्टो की भूमिका प्रमुख थी। जिस बेसब्री से अमेरिका बौद्धिक संपदा अधिकार लागू करने पर आमादा है उससे एकसमान सार्वभौमिक कानूनों की स्थापना के उसके इरादों पर संदेह होना स्वाभाविक है। राजनयिक दबावों के बल पर यह अन्य देशों को इसे मानने को मजबूर कर रहा है।

बॉक्स 14

ट्रिप्स को सार्वभौमिक बनाने के लिए विकासशील देशों को अमेरिका की 'आर्थिक नाके बंदी' की धमकी

अपने कुख्यात कानून सुपर 301 के तहत आई पी आर लागू न करने वाले देशों को आर्थिक नाकेबंदी की धमकी देना, अमेरिका की आदत बन चुकी है। 1997 में जब अर्जेंटीना ने अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि कार्यालय की इच्छानुसार अपने पेटेंट कानून में संशोधन से इंकार कर दिया तो अन्ततः अमेरिका ने अर्जेंटीना के निर्यात पर 26 करोड़ डालर का आयात शुल्क ठोंक दिया। पिछले कई सालों से अमेरिका इक्वाडोर को धमकी दे रहा है कि यदि उसने द्विपक्षीय बौद्धिक संपदा अधिकार के समझौते पर हस्ताक्षर नहीं किया तो अमेरिका उसके मछली निर्यात पर 8 करोड़ डॉलर का आयात शुल्क लगा देगा। पेटेंट कानूनों को लेकर भारत, पाकिस्तान, इथोपिया, ब्राजील एवं कई अन्य देशों को अमेरिका सुपर 301 की धमकी देता रहा है। डब्लूटीओ के अनुसार एकतरफा व्यापारिक प्रतिबंध गैर कानूनी है, लेकिन कोई भी देश व्यापारिक नाकेबंदी के डर से इसे चुनौती नहीं देता, क्योंकि व्यापारिक नाके बंदी उनकी अर्थव्यवस्था को अस्थिर कर देगी ।

पेड़–पौधों समेत सजीव वस्तुओं पर संपदा अधिकार का अनुच्छेद डंकल दस्तावेज का सर्वाधिक विवादस्पद मुद्दा रहा हैं। इसके पैरोकारों का कहना है कि लाभ के प्रोत्साहन और धोखाधड़ी पर रोक के माध्यम से इससे शोध में निवेश की सुरक्षा होगी। लेकिन सामुदायिक अधिकार और देशों की खाद्य सुरक्षा की प्रतिबद्धता कारपोरेटी भूमंडलीकरण के इस अभियान में रूकावटें हैं। पौधों और बीजों का विकास सार्वजनिक प्रयास का परिणाम है। सर्वाधिक जैव विविधता तीसरी दुनिया के देशों में है और उसकी समझ किसानों के पारंपरिक और सार्वजनिक लोक ज्ञान का हिस्सा है। सबसे खतरनाक यह है कि इससे जैव संसाधनों पर चंद बड़ी कंपनियों का एकाधिकार हो जाएगा, जो इसके शोध और विकास पर पर्याप्त व्यय कर सकती है। सार्वजनिक शोध अधिरचना या तो अत्यंत कमजोर है या फिर गैट्स के तहत सिमटने और बंद होने की प्रक्रिया में है, ऐसे में जाहिर है जैव विविधता पर कृषि व्यापार की कंपनियों का ही एकाधिकार होगा। 'सार्वजनिक भलाई के लिए' चलाए जा रहे 16 शोध केंद्रों को नियंत्रित करने वाले अंतरराष्ट्रीय कृषि शोध सलाहकार समूह (कंसलटेटिव ग्रुप ऑन इंटरनेशनल एग्रीकल्चरल रिसर्च – सी जी आई ए आर) के बोर्ड में सीन्गेन्टा है। इसका मतलब हुआ कि दुनिया का सबसे बड़ा जीवाश्म संग्रह इस

कंपनी के लिए सुलभ है। दोहा घोषणापत्र में कहा गया कि ट्रिप्स की समीक्षा होगी। लेकिन महा समिति की बैठक में किसी ने भी इस पर जोर नहीं दिया। कृषि व्यापार की दुनिया की खुशी के लिए, लगता है यह मुद्दा भुला ही दिया जाएगा। अन्य कृषि उत्पादों के साथ खाद्यान्न पर भी कृषि कारपोरेटी एकाधिकार से किसानों की दशा और भी दयनीय हो जाएगी। कृषि अर्थशास्त्र की जोड़ तोड़ से अब तक के सार्वजनिक रूप से सुलभ प्रमुख बीजों के मूल्य निर्धारण का अधिकार हथिया कर, कृषि व्यापार की कंपनियों ने उन्हें एक तरह से बंधक बना लिया है। गेहूं के 74 प्रतिशत जीवाश्मों (जीन) का पेटेंट तथा 47 प्रतिशत ज्वार के जीवाश्मों का पेटेंट 6 कॉरपोरेशनों के पास है दुनिया में ब्राजील की गणना जीवाश्म विविधता के क्षेत्र में सर्वाधिक सम्पन्न देशों में होती है। कृषि व्यापार की बड़ी–बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनी वहां के पौधों की सात प्रजातियों के आधे से अधिक का पेटेंट पहले ही करा चुकी हैं।

बॉक्स 15

वे मुंह के निवाले को भी पेटेंट करना चाहते हैं : सीन्गेन्टा द्वारा चावल का पेटेंटीकरण

एक ऐसे खाद्यान्न चावल के बीज पर अधिकार की दौड़ चल रही है जिससे मिली खाद्य सुरक्षा के बल पर कई सभ्यताएं फूली–फलीं। 113 देशों में शताब्दियों से धान की खेती होती आ रही है और 300 करोड़ से अधिक लोगों की आजीविका और भरण पोषण इसी पर निर्भर है।

सीनोन्टा ने इस प्रजाति के अनाज पर स्वामित्व का दावा किया है। अप्रैल 2000 में मोन्सान्टो ने चावल के जीवाश्मों को श्रेणीबद्ध करने के अंतरराष्ट्रीय शोधकर्ताओं के साथ चावल के जीवाश्म मानचित्र के कार्यकारी ड्राफ्ट में भागीदारी की पेशकश से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हलचल मचा दी थी जिस पर 300 करोड़ इंसानों की जिंदगी निर्भर है। ऐसे बीज के पेटेंटीकरण से कमाए गए मुनाफे को क्या कहेंगे, जैव धोखाधड़ी !

सीन्नेन्टा ने 99.5 प्रतिशत पर चावल की अनुवांशिकीय तालिका बना ली है और चावल के अनुवांशिकीय मानचित्र की सुलभता को नियंत्रित करता है तथा चावल पर किसी भी तरह के शोध पर अपने स्वामित्व के अधिकार के दावे की स्वीकृति की अपेक्षा रखता है। इस बीज पेटेंट अधिकार की प्रतिस्पर्धा पहले से ही जारी है। चावल की कई आनुवांशिकी प्रजातियों का पेटेंट अमेरिकी कंपनी डूपोन्ट ने पहले ही कर लिया है–(95 पेटेंट), उसके बाद 45 पेटेंटों के साथ जापान की मित्सुई है।

अतः ट्रिप्स लाभ की शर्त के साथ स्वामित्व के केंद्रीकरण का पैरोकार है। यह तथ्य ज्यादातर विकासशील देशों की खाद्य सुरक्षा के लिए एक बड़ा खतरा है। इन देशों की दो तिहाई आबादी खेती पर निर्भर है और उनमें से ज्यादातर छोटे और मझोले किसान हैं जिनकी क्रयशक्ति अत्यधिक सीमित है। भारत में ट्रिप्स का कुप्रभाव उजागर होने लगा है। इसकी अद्वितीय जैव विविधता पर धनी देशों का अधिकार स्थापित होता जा रहा है।

बॉक्स 16

भारत की जैव विविधता का अपहरण!

लंदन के आब्जर्वर अखबार में खबर छपी कि 100 भारतीय पौधों की प्रजातियां अमेरिकी पेटेंट ऑफिस में पेटेंट के लिए विचारार्थ हैं। आमला, जर आमला, अनार, सलाई, दुद्धी, गुलमेंहदी, बागभरंदा, करेला, रंमून की बेल, एरांद, विलायती शीशम, चमकुरा का पेटेंट कराया जा चुका है। गौरतलब है ये नाम हिंदुस्तान के बच्चे–बच्चे की जुबान पर रहते हैं।

यह पश्चिमी देशों की कंपनियों और सरकारों की बेबाक जैव धोखाधड़ी की एक मिसाल है। विकसित देशों की दुनिया का ज्ञान – जैव धोखाधड़ी और 'जैव सुरक्षा का दिखावा' – ट्रिप्स जिंदाबाद !

दूर से तो पेटेंट प्रणाली में कोई गड़बड़ी नहीं दिखती। लेकिन सफलतापूर्वक पेटेंट प्रणाली के समुचित कार्यान्वयन के लिए उच्चस्तरीय तकनीकी शोध, सक्रिय निवेशक और दक्ष पेटंट प्रतिष्ठान, प्रशिक्षित पेटेंट परीक्षक और वकील और एक प्रभावशाली न्यायिक प्रणाली, की अनिवार्य शर्तों का पालन जरूरी है। लेकिन अधिकांश जैव विविधता विकासशील देशों में है और ये इन अनिवार्य शर्तों के पालन में असमर्थ हैं।

मसलन, भारतीय बीज विधेयक में किया गया मौजूदा संशोधन बीज के पंजीकरण को अनिवार्य बनाता है और किसानों को खुद के बीच के इस्तेमाल के अधिकार से वंचित करता है। फिलहाल लगभग 85 प्रतिशत बीजों पर भारतीय किसानों का ही अधिकार है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि डब्लूटीओ की कृषि वार्ताएं ऐसे एजेंडा, सिद्धांतों, और माध्यमों पर जोर देती हैं जो कारपोरेटी कृषि व्यापार के हितों के अनुकूल हों, चाहे भले ही किसानों की आजीविका छिन जाए, भले ही भूखे को भोजन, खाद्य संप्रभुता का संरक्षण और सामरिक फैसलों की स्वतंत्रता की राष्ट्रों की जनतांत्रिक प्रतिबद्धता ही जार–जार क्यों न हो जाए।

कारपोरेटी कृषि व्यापार की विकरालता का आतंक

कारपोरेटी कृषि व्यापार की बड़ी कंपनियों के हाथों में धन और सत्ता का केंद्रीकरण, कृषि व्यापार का भयावह पहलू है। कारपोरेटी कृषि व्यापार एक ऐसे सशक्त तंत्र के रूप में उभर रहा है जो दुनिया भर में खाद्यान्न के उत्पादन, उगाही और आवागमन को नियंत्रित करेगा। औद्योगिक देशों में कुछ चुनी हुई फसलों को बेशुमार सब्सिडी एवं अन्य सरकारी सहायता मिलती है। इसमें ज्यादातर निर्यातोन्मुख उत्पाद हैं जिनसे उस देश और वहां की कृषि व्यापार कंपनियों के व्यापारिक और सामारिक हित सधते हैं। पिछले कुछ सालों से ये फसलें कृषि व्यापार की कुछ बड़ी कंपनियों के रणनीतिक नियंत्रण में हैं। दो दशकों के उदारीकरण के दौरान कारपोरेटी कृषि व्यापार कंपनियों के आकार और उनकी ताकत में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। 2002 में अकेले नेस्ले का कुल मुनाफा उस साल घाना जैसे देशों के कुल सकल घरेलू उत्पाद से अधिक था। वाल मार्ट का मुनाफा मोजाम्बीक और घाना की सम्मिलित आर्थिक क्षमता से अधिक था। संपूर्ण खाद्य श्रृंखला पर 'क्षैतिज और ऊर्ध्वाकार समाकलन' के जरिए, चंद कंपनियों के एकाधिकार ने एक ऐसे अल्पतंत्र का निर्माण किया है जो उत्पादन के किसी भी चरण में मूल्य अन्वेषण की कोई गुंजाइश ही नहीं छोड़ता।

भोजन पर नियंत्रण का फंदा कस जाने के बाद पेट पर लात मारना आसान हो जाता है। किसी भी वस्तु के निर्यात की अनुमति देना या न देना, वांछित सामग्री उपलब्ध कराना या न कराना, सब कुछ कारपोरेटी कृषि व्यापार की कंपनियों की मर्जी पर निर्भर करेगा। वे इस स्थिति में होंगे कि अंतरराष्ट्रीय कीमतों को मनमाफिक तरीके से प्रभावित कर सकेंगे, परिणामस्वरूप खेतिहर समुदाय और उपभोक्ता दोनों की ही स्थिति और भी दयनीय हो जाएगी।

क) नई जीएम तकनीक द्वारा दुनिया को भूख मुक्त करने के दावे की असलियत

''100 डॉलर प्रतिदिन या उससे भी कम कमाई करने वाले के लिए गैप से कपडा उत्पादन, एडिडास से स्नीकर, या आई बी एम से कम्प्यूटर के निर्माण की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए; उसी तरह एडीएम (दुनिया का सुपर बाजार) से उनके लिए भोजन उपलब्ध कराने की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए''।

–रिचर्ड एच रॉबिन्स, रीडिंग्स ऑन पावर्टी, हंगर एंड इकॉनॉमिक डेवलपमेंट

1974 में, रोम में, संयुक्त राष्ट्र विश्व खाद्य सम्मेलन में सरकारों ने भूख और कुपोषण के उन्मूलन का सार्वभौमिक घोषणापत्र जारी किया, लेकिन उत्पादन में कमी के परिप्रेक्ष्य पर ही जोर दिया जाता रहा और समस्या के राजनैतिक चरित्र को नज़रअंदाज किया जाता रहा। जब से अंतिम घोषणा में 'जीव अभियांत्रिकी शब्द को भूमंडलीय स्वीकृति मिली, तब से बायोटेक उद्योग ने अनुवांशिकीय तकनीकी खाद्य सामग्रियों को बाजार में ढकेलना शुरू कर दिया।

बॉक्स 17

सैकड़ों बार दुहराने से कोई झूठ सच बन जाता है क्या ?

अनुवांशिकीय अभियांत्रिकी या जेनेटिक इंजीनियरिंग की सबसे मुखर पैरोकार मोन्सान्टो ने इंगलैंड की मीडिया में प्रचार अभियान पर 1 अरब पाउंड व्यय किया। यह कंपनी विज्ञापनों पर हर साल 50 बुशेल डॉलर से अधिक खर्च करती है। बाद में इंग्लैंड के विज्ञापन मानक प्राधिकरण ने इस विज्ञापन की आलोचना की जुलाई 1999 मे प्राधिकरण ने फैसला दिया कि मोन्सान्टो के दावे 'भ्रामक' और 'छलपूर्ण' थे। मोन्सान्टो ने जनता को बताया कि भविष्य की भूखी पीढ़ियों की चिंता से उनका पेट नहीं भरेगा, और धीरे–धीरे इसकी स्वीकृति से यह विलासिता की वस्तु बन जाएगी, जो भूखी दुनिया की पहुंच से परे होगी। ....

1990 के बाद से चिरंतन भूखों की संख्या में वृद्धि के साथ वही अब दुनिया का 'मानवीय चेहरा' बन गया है, जिसकी आड़ में जीवन अभियांत्रिकी का भूख मिटाने का घोषित, मौलिक लक्ष्य बदल कर खाद्य श्रृखंला के उपनिवेशीकरण के जरिए उस पर नियंत्रण करना हो गया है। मोन्सान्टो, दुपोंट, सीन्गेन्टा अभी भी यही कह रहे हैं कि फसलों का भूख से कोई ताल्लुक नहीं है, भले ही लाखों

हेक्टेयर में उनकी खेती क्यों न होती हो। ज्यादातर खेतों में पशुओं के लिए बहुअनुवांशिकी सोयाबीन और ज्वार उगाया जाता है, जिसका सालाना व्यापार 3,72,888 करोड़ डॉलर का है।

अनुवांशिकीय तकनीक से निर्मित खाद्य पदार्थों का विकासशील देशों में अवैध परीक्षण, कारपोरेटी कृषि व्यापार की हड़बड़ी का परिचायक है। दक्षिण सुलाबेसी में बीटी कॉटन, बीटी कॉर्न और राउंडअप रेडी सोयाबीन के तथा पूर्वा कलिमंतन में बबूल और सफेदा के अवैध परीक्षण किए गए। सरकार इस बात का खंडन करती है लेकिन ठोस सकारात्मक प्रमाण, सरकारी खंडन की कलई खोल देते हैं।

भारत में 2003 के शुरू में अनुवांशिकीय अभियांत्रिकी संस्तुति समिति ने बीटी कॉटन को मंजूरी दे दी। इसकी खेती को चुनौती देने वाली एक याचिका उच्चतम न्यायालय में विचाराधीन है। इसके बावजूद जीईएसी ने इसका एकाधिकार अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कंपनी मोन्सान्टो और उसकी भारतीय सहयोगी कंपनी, महाराष्ट्र बीज निगम (महराष्ट्रा हाइब्रिड सीड कारपोरेशन – महीको) को दे दिया। बीज के अत्यधिक दाम साधारण कपास के बीज के दाम का चार गुना होने के बावजूद प्रमुख कपास उत्पादक राज्यों महाराष्ट्र, गुजरात और मध्यप्रदेश में इसकी खेती बुरी तरह नाकाम रही और कपास उत्पादक तबाह हो गए।

सजीव स्वरूपों में छेड़ छाड़ की नैतिक बहस को छोड़ दें तो इसका सबसे खतरनाक पहलू यह है कि इसमें किसान बीज और कीटनाशकों के लिए पूरी तरह कारपोरेटी कृषि व्यापार पर निर्भर हो जाएगा। जीएम फसलों के आसपास उगने वाली गैर–जीएम फसलों में भी कुछ अनुवांशिकीय परिवर्तन हो सकता है – खासकर पराग के पारस्परिक आदान प्रदान वाली फसलों में। जी एम खाद्य सामग्री के कानून किसानों को अपने बीज के इस्तेमाल के अधिकार से वंचित करते हैं, और पूर्ण स्वामित्व के अधिकार की आड़ में दोबारा रोपाई के लिए उनके संग्रह पर रोक लगाते हैं। मोन्सान्टो के लालच की भूख टर्मिनेटर टेक्नॉलॉजी (ऐसे बीज जो एक साल की रोपाई के बाद बांझ हो जाते हैं) की हिमायती है, जिससे उसे जरूरतमंद किसानों को एक सुनिश्चित सालाना बाजार मिलता रहे।

बॉक्स 18

यदि प्राकृतिक नियमों के तहत स्वाभाविक रूप से भी उनकी तकनीक किसी के खेत तक पहुंच जाए तब भी वह कारपोरेटी कृषि व्यापार का देनदार बन जाता है

कनाडा के पर्सी श्मेसियर पर मोन्सान्टो ने मुकदमा दायर किया कि वे बिना अनुमति के उसका कनोला उगा रहे थे। पर्सी एक जीएम कनोला खेत के बगल के अपने खेत में गैर जीएम कनोला की खेती कर रहे थे। मोन्सान्टो मुकदमा जीत गया और संपदा अधिकार के उल्लंघन के लिए 1,40,000 डॉलर का दावा किया। पर्सी एक छोटे किसान हैं और इस राशि की अदायगी के लिए उन्हें अपना घर और खेत सबकुछ बेचना पड़ा। यह अब मोन्सान्टो का वैध दावा बन गया है।

इस फैसले से फसलों के प्रकार के बारे में, गैर जीएम फसलों की खेती करने वाले किसानों के स्वतंत्र निर्णय के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

कनोला उत्पादक किसानों की नुमाइंदगी करने का दावा करने वाले, कनाडा की कनोला परिषद के अध्यक्ष ने कारपोरेटी महाबली मोन्सान्टो को ठोस समर्थन दिया। उसने कहा "इस फैसले से साफ है कि कंपनियों के पास अपने बौद्धिक संपदा अधिकार के इस्तेमाल के लिए शुल्क वसूलने का अधिकार है।"

अनुवांशिकीय संशोधन का सर्वाधिक आर्थिक लाभ कृषि व्यापार की कंपनियों को होता है। उसके बाद बहुत बड़े कृषि उत्पादक आते हैं जो पूंजी केंद्रित खेती विधिवत करने में सक्षम होते हैं। स्थानीय कृषि अर्थव्यवस्था पर इसका सर्वाधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ज्यादातर बायोटेक कंपनियां दावा करती हैं कि आनुवांशिकीय तकनीक के खाद्यान्न से भूख की समस्या हल हो जाएगी और खाद्य सुरक्षा बढ़ेगी, लेकिन शताब्दियों के अनुभव से विकसित ज्ञान और खाद्यान्न के पेटेंटीकरण से खाद्य सुरक्षा पर खतरा बढ़ जाएगा।

बॉक्स 19

बासमती संस्कृत शब्द वसन से निकला है या सीधे टेक्सास से आया है ?

राइसटेक ने अनुवांशिक संशोधन से बासमती बनाया, उसे सामान्य बासमती के नाम से बेचना शुरू किया और उसके इस कृत्य को विधिसम्मत पाया गया। दरअसल, 2000 में भारत सरकार द्वारा विरोध दर्ज किए जाने के बाद 4 पेटेंट वापस ले लिए गए। 2001 के मध्य अगस्त में राइस टेक ने तीन पेटेंट हासिल किए – टेक्समती, जसमती और कासमती– सभी बासमती और अमेरिकी लंबे चावल के वर्ण शंकर। राइसटेक को यह दावा करने की भी अनुमति मिल गई कि उसके उत्पाद "बासमती से बेहतर" हैं।

ख) कारपोरेटी कृषि व्यापार की अपार शक्ति – उर्ध्वाकार एकीकरण – बीज से लेकर उत्पादन की बिक्री तक

"यह केवल बीज कंपनियों के सुदृढ़ीकरण का मामला नहीं है बल्कि मामला संपूर्ण खाद्य श्रृंखला के सुदृढ़ीकरण का है।"

– रॉबर्ट फ्राली, कार्यकारी उपाध्यक्ष, मोन्सान्टो, 1996

कृषि व्यापार की एक महाबली कंपनी के एक उच्चाधिकारी का यह वक्तव्य खाद्य श्रृंखला के कारपोरेटी उपनिवेशीकरण के इरादों का परिचायक है। इसे इनके वायदों, जीव अभियांत्रिकी की स्वीकृति और अंतरराष्ट्रीय कानूनी करारों को मानने की सभी देशों की बाध्यता, के साथ मिलाकर देखें तो कृषि व्यापार की महाबली कंपनियों की अपार ताकत के बारे में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं बचती।

एकाधिकार

मोन्सान्टो, कारगिल, नेस्ले और बाल मार्ट जैसी चंद बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने, बीज से लेकर संवर्धित अंतिम उत्पाद की बिक्री और खेती की आवश्यकताओं तक, खाद्य और कृषि सामग्री की आपूर्ति की संपूर्ण श्रृंखला पर वर्चस्व स्थापित कर लिया है। इसके अलावा कृषि उद्योग में आई विलयन, अधिग्रहण और व्यापारिक समझौतों की लहर (परिशिष्ट – 2) ने सुनिश्चित कर दिया कि बाजार की सारी ताकत इन्हीं कुछ कार्पोरेशनों के हाथों में सिमटी रहे।

कृषि क्षेत्र उदारीकरण मुक्त बाजार का शोर तो मचाता है, लेकिन मुक्त बाजार के नाम पर यह दरअसल, कृषि व्यापार की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के अल्पतंत्रों

का निर्माण करता है, और अंतरराष्ट्रीय व्यापार नियमों की परिभाषा और निर्धारण के सारे अधिकार इन्हीं को सौंप देता है।

बॉक्स 20

राष्ट्रीय और भूमंडलीय कृषि खाद्य बाजारों पर कारपोरेटी एकाधिकार

1.) बीज और कृषि रसायन

– कीटनाशकों के 75 से 80 प्रतिशत भूमंडलीय बाजार पर 6 बहुराष्ट्रीय कंपनियों – बीएएसएफ, बेयर, मोन्सान्टो और सीन्गेन्टा – का नियंत्रण है। 1994 में यह संख्या 12 थी।

– ज्वार (65 प्रतिशत) और सोया (44 प्रतिशत) के बीजों की विश्व बाजार पर, दो कंपनियों – मोन्सान्टो और दुपोन्ट का वर्चस्व है।

2001 में जी एम बीज के बाजार के 91 प्रतिशत पर मोन्सान्टो का नियंत्रण था। दो सालों (1997–99) के अंतराल में वह ब्राजील के गैर जीएम ज्वार के बीज बाजार के 60 प्रतिशत पर काबिज़ हो गया।

– भारत में कीटनाशक बाजार के 22 प्रतिशत पर बेयर का नियंत्रण है।

2) खाद्य सामग्री का थोक व्यापार

– केले के विश्व बाजार के 50 प्रतिशत पर दो अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों – चिक्विता और डोल फूड्स का नियंत्रण है।

– कोते दि आइवरी के कोका संशोधन उद्योग पर आर्चर डैनियल्स मिडलैंड (एडीएम), बैरी कलेबॉटा, और कार्गिल का वर्चस्व है और 95 प्रतिशत संशोधन क्षमता पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नियंत्रण है।

– यूरोप की सबसे बड़ी मत्स्य वितरण कंपनी, फीफ्फेस का बेलिज़े और सूरीनाम से केले के निर्यात व्यापार पर एकाधिकार है।

–अमेरिका से मक्के के 80 प्रतिशत से अधिक के निर्यात व्यापार पर तीन कंपनियों – एडीएम, कार्गिल और ज़ेन नोह – का वर्चस्व है।

3.) खाद्य उत्पादन और संशोधन

– दुनिया भर में कृषि उद्योग की 100 सबसे बड़ी कंपनियों के कुल विक्रय के 37 प्रतिशत का संशोधन दुनिया की 10 सबसे बड़ी खाद्य संशोधन कंपनियां करती हैं।

– दुनिया की चाय बाजार के 85 प्रतिशत पर तीन कंपनियों का नियंत्रण है और चाय का सबसे बड़ा वितरक यूनीलीवर है।

– पाकिस्तान के यूटीएच दुग्ध बाजार पर नेस्ले का लगभग एकाधिकार है और पेरू के कुल दुग्ध उत्पादन के 80 प्रतिशत पर नेस्ले का नियंत्रण है।

– अमेरिका के गोमांस पैकिंग उद्योग पर कारगिल और टाइसन समेत चार कंपनियों का नियंत्रण है।

4.) खाद्य सामग्रियों का फुटकर व्यापार,

– दुनिया भर के किराना बिक्री का लगभग एक–तिहाई कारोबार फुटकर व्यापार की सबसे बड़ी 30 कंपनियां संभालती हैं। 2002 में इनमें से शीर्षस्थ 10 कंपनियों की सम्मिलित बिक्री 649 अरब डॉलर थी।

– मेक्सिको में 40 प्रतिशत फुटकर व्यापार पर वाल मार्ट का नियंत्रण है।

– थाईलैंड में खाद्य सामग्रियों की कुल बिक्री का 36 प्रतिशत फुटकर व्यापार की बहुराष्ट्रीय कंपनियां संभालती है। टेस्को की 48 दुकानें हैं और 2003 में इसने 1.2 अरब डॉलर का कारोबार किया।

– इंग्लैंड में खाद्य सामग्रियों की 75 प्रतिशत बिक्री आसदा वालमार्ट, सेफवे, सैन्सबरी और टेस्को कंपनियां करती हैं।

खेती की लागत में वृद्धि

खेती में लागत की सामग्री के लिए भी दुनिया भर के किसान कार्पोरेटी एकाधिकार बाजार के मोहताज हो गए हैं – खासकर व्यापारिक खेती के बीज, कीटनाशकों और खरनाशकों जैसे कृषि रसायनों के क्षेत्र में। पिछले कुछ सालों में कृषि लागत की इन चीजों का दाम तेजी से बढ़ा है और व्यापारिक खेती करने वाले किसान बेचारे दोनों तरफ से पिस रहे हैं उन्हें लागत पर खर्च ज्यादा करना पड़ रहा है और अपने उत्पाद के दाम कम मिलते हैं। कृषि बाजार के उदारीकरण के पहले विकासशील देशों के किसान कृषि रसायनों की आपूर्ति के लिए अपनी सरकारों पर निर्भर थे। अब ये सब्सिडियां या तो खत्म कर दी गई हैं या कम कर दी गयी हैं। इन लागतों पर किसानों का खर्च बढ़ गया। इसके अलावा बौद्धिक संपदा के डब्लूटीओ के नियमों से व्यापारिक बीज उद्योग के केंद्रीकरण की प्रक्रिया और तेज हो गई। डब्लूटीओ राज में व्यापारिक बीज पारंपरिक बीजों की तुलना में काफी महंगे मिलते हैं, क्योंकि इसके कानूनों के तहत कंपनियां किसानों से अधिकार शुल्क तो वसूलती ही हैं संरक्षित फसलों को लेकर उनके साथ प्रतिबंधित अनुबंध करती हैं।

बॉक्स 21

ज्यादा लागत और कम उपज

भारत में क्षेत्रीय शोध में पाया गया कि 2002–2003 में मोन्सान्टो के अनुवांशिक बीटी काटन की खेती करने वाले किसानों को गैर जीएम पारंपरिक बीजों के दामों की तुलना में जीएम बीजों पर 200 प्रतिशत से 300 प्रतिशत तक अधिक खर्च करना पड़ा। आंध्र प्रदेश के नालगांडा जिले के उत्पादकों को 450 ग्राम के बीटी काटन के बीज के लिए 1600 रु. देने पड़े जिसमें 1200 रुपये कपंनी के अधिकार शुल्क के मद में गये। पारंपरिक कपास के एक पैकेट बीज का दाम 450–500 रुपये है। बीजों के ऊंचे दामों के बावजूद बीटी काटन के कुछ खेतों की उपज स्थानीय कपास की उपज से भी कम थी। 2003–2004 में आंध्र प्रदेश के 27 गांवों के 164 कपास उत्पादक किसानों के एक सर्वेक्षण में बीटी काटन के किसानों द्वारा कीटनाशकों के इस्तेमाल में थोड़ी कमी पाई गई। लेकिन छोटे और मझोले किसानों के मामलें में बीटी और गैर बीटी किस्म के उत्पादनों में अन्तर नगण्य पाया गया। बीजों के ऊंचे दाम और खेती में ज्यादा लागत के चलते, छोटे और मझोले बीटी किसानों को गैर बीटी किसानों की तुलना में प्रति एकड़ 1526 रुपए का घाटा हुआ।

जैसे जैसे ज्यादा से ज्यादा किसान अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के साथ एकीकृत हो जाएंगे अंतिम उत्पाद के लाभ में उत्पादकों का हिस्सा घटता जाएगा।

कृषि खाद्य क्षेत्र में बढ़ते केंद्रीकरण के चलते किसान धीरे धीरे अपने उत्पाद चंद कंपनियों को ही बेचने को मजबूर होते जा रहे हैं। इससे कंपनियां सौदेबाजी में बेहतर स्थिति में होती हैं और अपनी सुविधानुसार बाजार भाव में हेराफेरी कर लेती हैं। सौदेबाजी की अपनी ताकत का इस्तेमाल ये कंपनियां इस हद तक करती हैं कि इनकी घुमावदार परिणति कृषि द्वार मूल्य (फार्म गेट प्राइस एफजीपी) में होती है।

बॉक्स 22

कार्पोरेटी अथवा निगमीकृत एकाधिकार की ताकत !

इंगलैंड की सुपर मार्केट बहुराष्ट्रीय कंपनी, आसदा वालमार्ट ने अपनी सौदेबाजी की ताकत से केले का फुटकर भाव 1.08 से घटाकर 0.98 डॉलर प्रतिकिलो कर दिया। अन्य सुपरमार्केट कंपनियां भी अपने आपूर्तिकर्ता किसानों से दामों में भारी कटौती की मांग करने लगे। 2004 तक इंगलैंड के सुपरबाजारों में केला 0.74 डॉलर प्रति किलो के भाव से बिकने लगा। खेत से बाजार तक पहुंचाने में केले के परिष्करण पर खर्च नगण्य होता है, फिर भी उत्पादक देश में फुटकर मूल्य का 12 प्रतिशत ही पहुंचता है। गौरतलब है कि लैटिन अमेरिकी और कैरीबियाई देशों में केले की खेती करोड़ों किसानों की आजीविका का निर्णायक आधार है। खरीददारों के हर पौंड (70 रुपये) में से लगभग 40 पेन्स सुपरबाजार का हिस्सा होता है जबकि बागान के मजदूर को केवल 1.05 पेन्स ही मिलता है।

1990 के बाद से बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा खरीदे जाने वाले कृषि उत्पादों के दामों में आई भारी गिरावट के बावजूद, कॉफी, चावल, दूध, गेहूं और चाय जैसे रोजमर्रा इस्तेमाल की सामग्रियों पर उपभोक्ताओं के खर्च में कमी नहीं आई। दरअसल कमी आने की बजाय इन सामग्रियों पर होने वाले खर्च में वृद्धि ही हुई है। इसका मतलब यह कि कंपनियों का मुनाफा बेइन्तहां बढ़ गया और किसान तबाह हो गए। ग्रामीण अर्थव्यवस्था बिखरने लगी।

किसान के विक्रय मूल्य और उपभोक्ता के क्रय मूल्य के बीच अंतर बढ़ता ही जा रहा है। उन देशों में यह अंतर और भी ज्यादा है जहां के कृषि बाजार पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नियंत्रण है। यानि कि किसान की आमद और उपभोक्ता के खर्च के बीच का अंतर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हस्तक्षेप की गहनता के समानुपाती है। उत्तर के देशों में भीषण प्रतिस्पर्धा और बाजार की संलिप्तता के चलते यहां कृषि व्यापार में लगी बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने, ज्यादा मुनाफे और सस्ते श्रम एवं कच्चे माल की सुलभता के लालच में, दक्षिण का रूख किया। दामों को कम रखने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियां, प्रायः एक देश के किसान को दूसरे देश के किसान के विरुद्ध खड़ा कर देती है। जैसे–जैसे बहुराष्ट्रीय कंपनियां खाद्य सामग्रियों की नई बाजारें तलाशती जाएंगी, श्रम सुलभता की फायदेमंद स्थिति के चलते दक्षिणी देशों के किसान प्रतिस्पर्धात्मक फसलों की खेती करने को बाध्य होते जाएंगे।

विश्व बैंक के एक आकलन के अनुसार, खेत के दाम और फुटकर दाम में भारी अंतर के चलते निर्यातक देशों को प्रतिवर्ष 100 अरब डॉलर से अधिक का घाटा होता है।

बॉक्स 23

हर अगली कड़ी में मूल्य जुड़ता ही जाता है

आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के कुछ हिस्सों में कई किसान धर्किन की खेती करते हैं। उत्तरी देशों में अचार के रूप में इसकी काफी खपत है। इस क्षेत्र में एसीई और ग्लोबल ग्रीन थापर समूह नामक दो अनुबंध कंपनियां सक्रिय हैं जो कि संशोधन प्रक्रिया से भी जुड़ी हैं।

अतीत में ये कंपनियां कई बार अनुबंध की शर्तों को धता बताते हुए, विभिन्न बहानों से अनुबंधित उत्पाद खरीदने से इंकार कर चुकी हैं। वे न तो उत्पादन की जहमत उठाते हैं और न ही बाजार की अस्थिरता का खतरा। दोनों ही मोर्चे किसानों को ही संभालने पड़ते हैं। अनुबंध कंपनियां, एसीई और ग्लोबल ग्रीन किसानों से क्रमशः 22.9 रु और 57.6 रुपए प्रति किलो के भाव से धर्किन खरीदती हैं।

उत्तरी देशों में इसके प्रति बोतल (250 ग्राम) का औसत फुटकर मूल्य 4–5 डॉलर है। भारत में ग्लोबल ग्रीन इसके अचार के 500 ग्राम की बोतल 100 रुपए में बेचती है। धर्किन उत्पादक को औसतन 7 रुपए प्रति किलोग्राम मिलता है, वह भी इसकी कोई गारंटी नहीं कि संबद्ध कंपनी अनुबंधित उत्पाद खरीदेगी ही। इस तरह हम देखते हैं कि अंतिम फुटकर मूल्य में असली उत्पाद का हिस्सा महज 0.008 प्रतिशत है।

इतना ही नहीं धर्किन की श्रेणीबद्धता इतनी जटिल है कि किसानों के उत्पाद प्रायः सबसे नीची या औसत कोटि के पाए जाते हैं, जिनका बाजार भाव कम है।

डंका पीटा जाता है कि कार्पोरेटी नीतियां किसानों के हित में हैं, लेकिन मुनाफा उन तक नहीं पहुंच पाता। इस प्रक्रिया में सबसे कम फायदा उत्पादक का होता है लेकिन उत्पादन और बाजार, दोनों के ही खतरे उसे ही उठाने पड़ते है। खाद्य सामग्री के अंतिम मूल्य का ज्यादातर भाग व्यापार की अंतिम कड़ी में जुड़ता है जिससे सर्वाधिक फायदा बहुराष्ट्रीय कंपनियों को होता है, जिन पर 'हींग लगे न फिटकरी रंग चोखा' की कहावत चरितार्थ होती है। इसमें सबसे अधिक प्रतिकूल प्रभाव छोटे और मझोले किसानों पर पड़ता है।

संपूर्ण खाद्य श्रृंखला पर कार्पोरेटी एकाधिकार और ऊर्ध्वाकार एकीकरण के चलते एक क्षेत्र के नुकसान की भरपाई दूसरे क्षेत्र के फायदे से हो जाती है। सुविधाजनक पेटेंट प्रणाली, एक घातक हथियार के रूप में ट्रिप्स का इस्तेमाल और डब्लूटीओ के बाध्यकारी कानूनों की मदद से औद्योगिक दुनिया, दक्षिणी देशों के 1.3 अरब छोटे किसानों की कीमत पर संपूर्ण खाद्य श्रृंखला पर कब्जा करने को आमादा दिखती है। गौरतलब है कि खेती ही इन किसानों की आजीविका का एकमात्र आधार है।

तालिका 3

क्षेत्र/ कृषि व्यापारिक फर्म	प्रमुख गतिविधियां	प्रमुख मुद्दे	किसानों पर प्रभाव
जीन, बीज और रासायनिक लागत: सीन्गेन्टा, मोन्सान्टो, डूपोंट, बायर	बीज और कृषि रासायनिक उत्पादन	– बौद्धिक संपदा पर नियंत्रण – गरीब किसानों के लिए अनुपयुक्त तकनीक को प्रोत्साहन – जीवन रक्षक कृषि विकल्पों का उन्मूलन	– खेती से बचाए गए बीजों के संरक्षण और आदान प्रदान पर रोक – बढ़ी लागत –कीटनाशकों का विषवमन – ऋण चक्र
खाद्य एवं सूत व्यापार, कच्चे माल का संशोधन	कच्चे माल का व्यापार एवं प्रारंभिक संशोधन	– बाजार की ताकत के बल पर दामों में गिरावट – अनुचित क्रय प्रथा	–निम्न आय –अस्थिर बाजारों का सामना – व्यापारिक व्यय और खतरे उत्पादकों के नाम – बाजार से बेदखली
एडीएम, लोइस ड्रेफस, बंगी, कारगिल	खाद्य एवं पेय पदार्थों का संशोधन	–बाजार शक्ति से दाम घटाना –कठोर मानक तय करना –अनुचित क्रय प्रथा	–निम्न आय – व्यापार की लागत और खतरे उत्पादकों के नाम –बाजार से बेदखली
आगे का संशोधन उत्पादन नेस्ले, क्राफ्ट फूड, यूनीलीवर, पेप्सिको सुपर मार्केट: वालमार्ट, केयरफोर, मेट्रो, टेस्को	खाद्य सामग्री की फुटकर बिक्री	–बाजार की ताकत से दाम कम करना – कठोर मानदंड तय करना – अनुचित खरीदारी	कम आय –व्यापार की लागत और खतरे उत्पादकों के नाम – बाजार से बेदखली

कृषि सेवाएं: गैट्स का अधिकार क्षेत्र

'निजीकरण की लंबी प्रक्रिया की दिशा में विकेंद्रीकरण पहला कदम है'

– कृषि विस्तार, वर्ल्ड बैंक स्टडी, 1994 फीडर एट एल

– कृषि विस्तार, अनुवांशिक चुनौतियां और समाधान के तत्व

कृषि क्षेत्र में गैट्स के दुष्प्रभाव भारत के कई हिस्सों में दिखने लगे हैं। इसका मतलब कृषि संबंधी सेवाओं में विदेशी निजी क्षेत्र को प्रवेश का 'अधिकार' देना है। इसके प्रभाव में आने वाले प्रमुख क्षेत्र हैं:

भूस्वामित्व, सरकारी कृषि विस्तार सेवाएं (सिंचाई, बिजली, कृषि विस्तार अधिकारी आदि), ग्रामीण विकास नीतियां (बाजार अधिनियम, भारतीय खाद्य निगम का गठन, सार्वजनिक वितरण प्रणाली) कृषि सहकारी (कोआपरेटिव) आदि।

सुनियोजित और राजनैतिक पहुंच के तंत्र द्वारा सरकारों को कृषि समेत तमाम क्षेत्रों में गैट्स लागू करने के लिए राजी कर लिया गया। गैट्स के पैरोकारों में डुपोंट, मोन्सान्टो, कनाडा की कनोला कौंसिल, सीन्गेन्टा आदि बहुराष्ट्रीय कंपनियां शामिल हैं। अभी विस्तार सेवाओं के 5 प्रतिशत पर ही निजी क्षेत्र का नियंत्रण है लेकिन यदि प्रतिबंध हटा लिए गए तो कृषि व्यापार और कृषि सेवाओं में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भरमार हो जाएगी। इसकी प्रक्रिया शुरू हो चुकी है।

बॉक्स 24

गैट्स के कारनामे – उपभोक्ताओं पर बढ़ता भार

7 सितंबर 2004 को विश्व बैंक ने मध्यप्रदेश सरकार को 17.82 अरब रुपए का एक नया ऋण दिया – जल समायोजन ऋण। इस परियोजना का मकसद कृषि सब्सिडी की समाप्ति और जल कर बढ़ाना है। प्रबंधन स्वयं करने वाले निकाय के रूप में जल

उपभोक्ता परिषद का गठन किया गया। यह निकाय जल वितरण का काम करेगा। इसका मतलब यह कि बिल बनाने और भुगतान इकट्ठा करने की जिम्मेदारी भी इसी की होगी। इससे सरकार जनाक्रोश के कोप से बची रहेगी क्योंकि स्थानीय लोगों का गुस्सा इन्हीं सामुदायिक निकायों पर उतरेगा।

कृषि उत्पादकों के लिए नियंत्रित बाजार में बदलाव (कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम और प्रमुख उत्पादों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की समाप्ति); इस पर होने वाले भारी खर्च से बचाव के बहाने भारतीय खाद्य निगम का विघटन;सार्वजनिक वितरण प्रणाली को निष्प्रभावी बनाने (पहले गरीबी रेखा के ऊपर और नीचे की विभाजक रेखा खींच कर फिर खाद्य पत्र जारी करके); जमीन के पट्टे में बाजार की शुरूआत (खेती के बड़े भूखंडों का ठेके की खेती या कारपोरेटी खेती के लिए पट्टा); आदि माध्यमों से कृषि सेवाओं का भारत में व्यापार शुरू हो चुका है। इसके दुष्परिणाम आने वाले दिनों में कहर बरपाने वाले हैं।

दरअसल, इस दिशा में पहले ही शुरूआत हो चुकी है। महिंद्रा एंड महिंद्रा, रिलायंस, भारती आदि तमाम कंपनियां कृषि सेवाओं के क्षेत्र में औजारों और लागत के सामान, जमीन का पट्टा आदि में कूद पड़ी हैं। 'उभरते बाजार विकास कार्यक्रम के तहत इंटरनेशनल फाइनेन्स कार्पोरेशन इन कंपनियों को वित्तीय सहायता प्रदान कर रहा है। अब तक यह सर्वविदित हो चुका है कि विकसित देश भारत को दुनिया भर की साग सब्जियों की टोकरी के रूप में तब्दील करना चाहते हैं, जिससे उत्तर देशों के सुपर बाजारों और विकसित देशों के रईसगाहों में सागसब्जी की अनवरत आपूर्ति सुनिश्चित हो सके। इस जमीनी सच्चाई को देखते हुए बहुपक्षीय संस्थानों के ऋण से विविधीकरण के सरकारों के तर्क को समझना मुश्किल नहीं हैं। इस दिशा में काम को आगे बढ़ाने के लिए तमाम अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय प्रतिष्ठान आईएफआई के जरिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान कर रहे हैं: उड़ीसा (डीएफआईडी), म.प्र (विश्व बैंक), आंध्रप्रदेश (विश्व बैंक, डीएफआईडी), पश्चिम बंगाल (विश्व बैंक) और उत्तरांचल (विश्व बैंक)। मुख्यधारा के अर्थशास्त्री भी मानने लगे हैं कि इससे पेट्रोलियम आदि सामग्रियों के आयात के लिए आवश्यक भारत की विदेशी मुद्रा की समस्या का समाधान हो जाएगा। इसी समझ के तहत भारत भर में कृषि संशोधन प्रखंडों का गठन किया गया। जिससे हर राज्य में खास सब्जियों और फलों का उत्पादन सुनिश्चित किया जा सके।

भविष्य का एजेंडा

डब्लूटीओ के मौजूदा प्रस्ताव इसके सदस्यों, खासकर विकसित देशों की अंदरूनी राजनीति को परिलक्षित करते हैं और खाद्य सामग्री तथा परिष्कृत भोजन के व्यापार में संलग्न बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के हिमायती हैं। जिन संदिग्ध परिस्थितियों में जुलाई फ्रेमवर्क तैयार हुआ उसमें धनी देशों की दादागिरी और दबाव का वर्चस्व था और दुनिया भर के तमाम देश उत्तर के धनी देशों की मांगों के सामने घुटने टेकने को मजबूर हो गए। दिसंबर 2005 में होने वाली मंत्रिस्तरीय बैठक संप्रग सरकार के लिए सुनहरा अवसर प्रदान करती है। वह सत्ता में लाने वाली जनता के पक्ष में कड़ा रुख अपना सकती है। गौरतलब है कि जिस भारतीय जनता ने संप्रग को सत्ता में बैठाया उसमें ज्यादातर किसान हैं।

दरअसल, संप्रग सरकार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की अंधड़ में किसानों के हितों की रक्षा और उनके पक्ष में व्यापार की शर्ते सुनिश्चित करने को वचनबद्ध है। इन सरोकारों को ध्यान में रखते हुए पांचवी मंत्रिस्तरीय बैठक में हमारी सरकार की मांगें होनी चाहिए :

यूरोपीय संघ और अमेरिका के दोहरे मानदंडों का विरोधः

व्यापार को विकृत करने वाले अमर्यादित ग्रीन बॉक्स को प्रतिबंधित करना। व्यापार को अत्यधिक असंतुलित बनाने वाले घरेलू समर्थन की अंबर बॉक्स कोटि की समाप्ति। विकासशील देशों के बाजारों की जबरन सुलभता हासिल कर चुके विकसित देशों की बाजार की सुलभता के लिए उनके करों में कटौती। 'संवेदनशील उत्पादन' की कोटि को चुनौती।

सभी प्रकार की निर्यात सब्सिडी की समाप्तिः

विकसित देशों ने एक 'खास तारीख' तक निर्यात सब्सिडी समाप्त करने का

वायदा किया है, लेकिन यह नहीं बताया कि वह खास तारीख कब आएगी। विकासशील देशों के पक्ष में इसके लिए उन पर दबाव बनाया जा रहा है।

खाद्य सुरक्षा का बचाव:

'विशेष उत्पाद' (भारत की खाद्य सुरक्षा से जुड़ी फसलें) के जरिए भारतीय कृषि की सुरक्षा पर ही भारत की संप्रभुता टिकी है। इसके अलावा ऐसी प्रणाली विकसित करना जिससे भारतीय कृषि बाजार को आयात के हमले से बचाया जा सके, जिसके बारे में जुलाई दस्तावेज मौन है। केवल ये प्रस्ताव ही खाद्य सुरक्षा तो नहीं सुनिश्चित कर सकते लेकिन ये राष्ट्रीय उत्पादन क्षमता को क्षति पहुंचाने वाले आयात और डंपिंग से भारत के बाजारों को बचाने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

प्रक्रिया का लोकतांत्रीकरण

दोषपूर्ण प्रक्रिया से अच्छे समझौते असंभव हैं। दोहा दौर की व्यापार वार्ताओं पर जुलाई फ्रेमवर्क में सहमति को लेकर अमेरिका और डब्ल्यूटीओ के कुछ अन्य सदस्य अपनी पीठें थपथपा रहे हैं, लेकिन हकीकत यह है कि 147 में से कम से कम 119 देशों को ज्यादातर इस वार्ता से बाहर रखा गया। कई देशों ने वार्ता की "अनौपचारिक" अलिखित और जवाबदेही रहित कार्यवाही पर असंतोष व्यक्त किया। डब्लूटीओ के प्रचलन के अनुरूप कुछ ही देश मिलकर फैसला कर लेते हैं और अत्यंत कम समय के नोटिस पर उसे प्रबंध समिति के पास अनुमोदन के लिए भेजते हैं। अधिकारिक वार्ताओं में डब्लूटीओ के नियम स्पष्ट होने चाहिए, 'पर्दे के पीछे' की वार्ताओं की जगह सभी 147 सदस्यों की प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करने के प्रावधान होने चाहिए।

जी–20 की ताकत को मान्यता

माना जाता है कि जी–20 की एकता कितनी भी अस्थिर क्यों न हो, इसने वार्ताओं पर यूरोपीय संघ, अमेरिका और जापान के एकाधिकार को तोड़ दिया। जेनेवा बैठक के दौरान निजी हितों की सुरक्षा के प्रयास में जी–20 में दरार दिखने लगी। उत्तरी देशों ने मान लिया की समूह टूट गया। डब्लूटीओ वार्ताओं में अपने व्यापारिक सरोकारों को आगे बढ़ाने के लिए जी–20 की एकता को तोड़ना विकसित देशों के लिए जरूरी था। अमेरिका, यूरोपीय संघ और जापान की साम्राज्यवादी नीतियों से विकासशील देशों के करोड़ों किसानों को बचाने के लिए जी–20 की एकता और एकजुटता जरूरी है। जी–20 की एकता उत्तर

के देशों की ताकत को चुनौती दे सकती है। यद्यपि जी–20 के अलग अलग देशों के विशिष्ट कृषि सरोकार अलग–अलग हैं, लेकिन समय का तकाजा है कि जी–20 के सदस्य पारस्परिक प्रतिबद्धता के साथ एक व्यापक संगठित मंच की स्थापना करें जिससे वे आजीविका, सामरिक संप्रभुता और अंतर्राष्ट्रीय बाजार को तर्कसंगत बनाने के मुद्दों पर एक स्वर में आवाज उठा सकें। विकासशील देशों के पक्ष में दूरगामी फैसलों का यही एक तरीका है।

दूरगामी परिणामों को ध्यान में रखकर, दूरगामी एजेंडे में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में व्याप्त असमानता के मूल कारणों को रेखांकित करना होगा। भारत और अन्य विकासशील देशों के गले में फंदा कसता ही जा रहा है क्योंकि वे कृषि व्यापार की बड़ी कंपनियों, उत्तर देशों की सरकारों, आईएफआई और डब्लूटीओ की ताल पर नाचने को मजबूर हैं। व्यापार की तर्क संगत शर्तों की स्थापना के लिए जरूरी है कि त्वरित उदारीकरण चाहने वालों खासकर अमेरिका, केअर्न्स लॉबी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों तथा विश्वबैंक/आईएमएफ की विचारधारा से टकराना पड़ेगा। इसके लिए जरूरी है कि एक दूरगामी रणनीति बनाई जाए, जिसके तहत इनके अंतः संबंधों की उचित समझ के साथ तथाकथित जनतांत्रिक डब्लूटीओ पर इनके वर्चस्व को चुनौती दी जाए।

डंपिंग पर रोक

डंपिंग की समस्या से निपटने के लिए, डब्लूटीओ के मौजूदा कानून, संबद्ध देशों को उन आयातों पर कर लगने की छूट देते हैं जिनके दाम घरेलू बाजार के दामों से काफी कम हैं। लेकिन यह कर अपर्याप्त है और इसे लागू करना मुश्किल। व्यापक और चिरंतन अतिरिक्त उत्पादन से भाव गिरते हैं और डंपिंग दीर्घकालिक समस्या बन जाती है। 'डंपिंग के मुनाफे की माप उत्पादन की लागत और अधिकतम सामाजिक लाभ के आधार पर होनी चाहिए, घरेलू बाजार के प्रायोजित दाम के आधार पर नहीं। कुछ विकासशील देश सब्सिडी के जरिए अपने उत्पादकों की रक्षा करने में सक्षम हैं लेकिन उन्हें कर लगाने जैसे ठोस उपायों की छूट होनी चाहिए।

खाद्यान्न आयात की बाध्यता से मुक्तिः

कृषि समझौते के अनुसार, विकासशील देशों को खाद्यान्न की कुल खपत का 3 प्रतिशत आयात करना पड़ेगा। जाहिर है कि इसका मकसद बहुराष्ट्रीय

कंपनियों के लिए बाजारों की सुलभता हासिल करना है। यह स्वेच्छा से आयात निर्यात के देशों के निर्णय के अधिकार पर एक कुठाराघात है। अतिरिक्त खाद्यान्न पैदा करने वाले भारत जैसे देशों के लिए इसके विनाशकारी दुष्परिणाम होंगे। कृषि समझौते के इस प्रावधान को खत्म करने की जरूरत है। गरीबी उन्मूलन सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है कि अपने कृषि बाजारों के उदारीकरण की रफ्तार और स्तर के फैसलों का अधिकार खुद गरीब देशों के पास हों।

बाजार के एकाधिकार पर नियंत्रण

भूमंडलीय उपभोक्ता बाजारों पर क्षैतिज्य और उर्ध्वाकार एकाधिकार, बाजार में विकृति का प्रमुख कारण है। संभावित नीतिगत प्रतिक्रियाओं में, कई देशों में एक साथ सक्रिय कृषि व्यापार की कंपनियों के प्रस्तावित विलय और अधिग्रहण की अंतर्राष्ट्रीय समीक्षा भी शामिल होनी चाहिए। सरकारी व्यापारिक उपक्रमों पर लागू होने वाला न्यूनतम पारदर्शिता का मानदंड, भूमंडलीय या राष्ट्रीय बाजारों में किसी खास सामग्री पर 20 प्रतिशत से अधिक का कारोबार करने वाली कंपनियों पर भी लागू होना चाहिए।

बॉक्स 25

किसान समूहों को क्या करना चाहिए ?

बहुपक्षीय प्रतिष्ठानों के दबाव में भारतीय कृषि की रणनीतिक बुनियाद कमजोर हो रही है। इनमें विकसित देशों और कंपनियों के प्रभाव प्रमुख हैं। जिस रास्ते पर भारत चल रहा है उससे यहां के ग्रामीण समुदायों को अपूरणीय क्षति पहुंचेगी। अपने बीज बचाने और फसल उगाने एवं बेचने के निर्णय के अधिकार उनसे छिन जाएंगे। इस दस्तावेज के लागू होने से भारत के बाजार आयातित सस्ते माल से पट जाएंगे जिससे निपटने में असफल किसान अपनी फसलों के ढर्रे में तब्दीली करने को बाध्य होकर लागत मूल्य की चक्की में पिस जाएंगे।

भारतीय कृषि पर निरंतर हमले से बचने के कुछ उपाय निम्न हैं:

मंत्रियों को महासमिति या मंत्रिस्तरीय बैठकों में दिए गए उनके भाषणों और प्रतिबद्धताओं के लिए जवाबदेह बनाया जाए।

डब्लूटीओ की बैठकों में जाने के पहले मंत्रियों को किसानों, किसान नेताओं, कृषि विशेषज्ञों, व्यापार समीक्षकों और किसान संगठनों से राय मशविरा करना चाहिए और

स्पष्टीकरण देना चाहिए कि वे क्या रुख अपनाएंगे। मंत्रियों और किसान नेताओं की एक समिति होनी चाहिए जो डब्लूटीओ बैठकों के पहले और बाद में संबद्ध पक्षों की बैठक बुलाने के लिए उत्तरदायी हो। विवादास्पद मुद्दों – सब्सिडी, पेटेंट, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, सेवा क्षेत्र में निजी क्षेत्र की भागीदारी आदि – पर अपना मत स्पष्ट करने के लिए सरकार को बाध्य किया जाए।

एक साफ सुथरी प्रक्रिया में सरकार को तत्काल एक श्वेत पत्र जारी करना चाहिए जिसमें पिछले एक दशक में अपनाई गई आत्मघाती कृषि नीतियों के प्रभाव से क्षेत्रवार उत्पादन, आवश्यक खाद्यान्नों की खेती की जगह विविधीकरण, घटती कृषि आय, घटती प्रतिव्यक्ति आय (खासकर छोटे और सीमांत किसानों के मामलों में), हजारों किसानों की खेती से बेदखली और आजीविका की तलाश में शहरों की तरफ पलायन आदि पर स्पष्टीकरण हो। श्वेत पत्र में नई नीतियों से भारतीय कृषि को होने वाले फायदे नुकसान का ब्योरा होना चाहिए।

भारत की आधी से अधिक आबादी को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर किसी भी कृषि विधेयक पर सार्वजनिक बहस होनी चाहिए, राज्यों की विधायिकाओं में चर्चा होनी चाहिए; किसान समूहों, विशेषज्ञों, विश्लेषकों और किसानों को इसकी सही जानकारी होनी चाहिए और उनके मत का सम्मान होना चाहिए। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए सरकारों पर जनांदोलनों का दबाव बनाना आवश्यक है।

खेती के कारपोरेटीकरण के प्रयासों का विरोध

कृषि उत्पाद व्यापार अधिनियम को समाप्त करने या निष्प्रभावी बनाने के सारे प्रयासों को नाकाम करना। गौरतलब है कि इस अधिनियम के चलते निजी कंपनियां किसानों से थोक खरीद नहीं कर सकतीं। भूमि के पट्टे के बाजार की स्थापना को रोकना तथा भूमि परिसीमन अधिनियम को खत्म करने का विरोध करना क्योंकि इस अधिनियम के निरस्त हो जाने से निजी कंपनियां हजारों एकड़ कृषि भूमि और गैर कृषि भूमि पर काबिज हो जाएंगी। प्रस्तावित बीज विधेयक का विरोध, क्योंकि यह विधेयक किसानों से अपने बीज संरक्षित रखने के अधिकार छीन लेगा क्योंकि उनके बीज अनिवार्य पंजीकरण में अयोग्य ठहरा दिए जाएंगे। इसके अलावा इस विधेयक से पौध प्रजाति और किसान अधिकार अधिनियम 2001, के किसानों की पक्षधरता वाले प्रावधान निष्प्रभावी हो जाएंगे।

ये उपाय खेती की ठेकेदारी या कारपोरेटी खेती की बुनियाद हिला सकते हैं।

पश्चिम भारत में आनुवांशिक खेती की अनुमति को तत्काल निरस्त किया जाए।

अकुशलता या विदेशी मुद्रा के दोहन के बहाने भारतीय खाद्य निगम को विघटित करने के सरकारी प्रयासों का विरोध। (भारत में बाजार की छोटी हिस्सेदारी भी कृषि व्यापार की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए काफी है।) सरकारी भंडारों की वित्तीय आवश्यकता

परिशिष्ट 1

डब्लूटीओ के कृषि समझौते की शब्दावली

गैट: कर और व्यापार पर सामान्य समझौता। 1947 में गैट का गठन वार्ता के जरिए करों में कटौती के लिए किया गया। गैट के ताजा संस्करण पर अप्रैल 1994 में मर्राकश में हस्ताक्षर हुए।

डब्लूटीओ: विश्व व्यापार संगठन। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के नियमों पर वार्ता का एक स्थाई मंच जिसकी स्थापना उरूग्वे दौर में हुई और समझौतों पर 1994 में मर्राकश में व्यापार मंत्रियों की बैठक में हस्ताक्षर हुए।

कृषि समझौता: 1994 में मर्राकश में स्वीकृत उरूग्वे दौर के समझौतों में से एक समझौता। इस समझौते में डब्लूटीओ के सभी सदस्यों के लिए कृषि व्यापार के नियम हैं। इसका घोषित उद्देश्य है : "उचित और बाजारोन्मुख कृषि व्यापार प्रणाली की स्थापना"। इसे लागू करने के लिए विकसित देशों के लिए छ साल और विकासशील देशों के लिए 9 साल का समय दिया गया। समय की गणना समझौते के अस्तित्व में आने की तारीख 1 जनवरी, 1995 से की जाएगी। कृषि समझौते में आत्म समीक्षा या नवीनीकरण के प्रावधान हैं। इस पर पुनवार्ता की प्रक्रिया जारी है। यह वार्ता दोहा में डब्लूटीओ की मंत्रिस्तरीय बैठक में 1 अगस्त, 2004 को जेनेवा पैकेज में तय किए गए मानकों के आधार पर हो रही है।

दोहा दौर : डब्लूटीओ की चौथी मंत्रिस्तरीय बैठक नवंबर 2001 में दोहा, कतर में हुई। व्यापार मंत्रियों ने व्यापार समझौतों के लिए मुद्दे और समय सूची वाले दोहा एजेंडा पर हस्ताक्षर किए। कृषि समझौता दोहा दौर में तय नवीनीकरण

वाले समझौतों में से एक है। सभी मुद्दों पर समझौतों की शुरूआती समय सीमा जनवरी 2005 थी। लेकिन दोहा समझौतों में से किसी की भी समय सीमा का पालन नहीं हुआ। अब वार्ता के दौर के पूरा होने की प्रस्तावित समय सीमा 2007 है। दोहा एजेंडा मे एक प्रावधान है कि वार्ताओं की परिणति ''एकल प्रतिज्ञा'' में हो। इसका मतलब यह है कि विभिन्न मुद्दों पर तमाम समझौतों (कृषि, सेवा, बौद्धिक संपत्ति आदि) को एक समझौता समझकर हस्ताक्षर हो। किसी भी देश को सभी समझौतों को मानना या मानने से इंकार करना होगा। उरूग्वे दौर भी समेकित समझौतों का दौर था।

डंपिंगः डंपिंग का आशय उत्पादन की लागत से कम दाम पर सामग्रियों का निर्यात। गैट के छठे अधिनियम में वैसे डंपिंग की मनाही की गई है। डब्लूटीओ की शब्दावली में डंपिंग को घरेलू बाजार मूल्य से कम दाम पर वस्तुओं के निर्यात के रूप में परिभाषित किया गया है। व्यापार अधिकारियों का मानना है कि डंपिंग से आयातक देश को फायदा होता है उन्हें सस्ते सामान मिल जाते हैं, यदि आयातक देश शिकायत न करे क्योंकि इससे स्थानीय उत्पादकों की आजीविका खतरे में पड़ती हैं। अतः यह देशों पर निर्भर करता है कि वे डंपिग से अपने को बचाने के लिए राष्ट्रीय कानून बनाएं। डंपिंग से देशी उत्पादकों को खतरा है यह प्रमाणित करने की जिम्मेदारी डंपिंग से प्रभावित देश की है।

टैरिफ्सः यह वह शुल्क है जो देश के अन्दर आने वाले आयातों पर लगाया जाता है। इसे मात्रा के आधार पर या उत्पाद विशेष के आधार पर तय किया जाता है। अन्य शुल्कों की तरह यह भी सरकार के लिए राजस्व का स्रोत है।

गैर–टैरिफ बैरियरः केवल टैरिफ ही आयात के नियंत्रण का एकमात्र जरिया नहीं है। आयातों के नान टैरिफ बैरियर्स के जरिये भी प्रभावित किया जाता है। नान टैरिफ बैरियर उत्पादक की सीधे मदद करता है न कि सरकार की। इसे कई तरीके से किया जाता है जैसे– कोटा का माध्यम (आयात की सीमा निश्चित करना), लेवी को कम ज्यादा करना जिससे घरेलू बाजार में उत्पादों के दाम स्थिर रहें, बाजार में स्थानीय उत्पादों का अनुपात निर्धारित करना।

टैरिफ रेट कोटाः टैरिफ रेट को कम करके निर्धारित कोटे की आपूर्ति सुनिश्चित करवाना। इस प्रावधान के पीछे यह सोची–समझी रणनीति है कि निर्यातक देशों के लिए दुनियाभर में बाजार उपलब्ध हो सकें।

स्पेशल सेफगार्ड प्रावधान : यह एक नया प्रावधान है जिसके तहत विकासशील देशों को यह अधिकार होगा कि वे आयात पर आवश्यकतानुसार रोक लगा सकें।

अ). **एक्सपोर्ट सब्सिडीज**: उत्पादों के निर्यात हेतु राजकीय सहायता। जो करों में छूट तथा नकदी मदद, कर्ज आदि के रूप में हो सकता है। इसका उद्देश्य होता है घरेलू बाजार को प्रतिस्पर्धी बनाना तथा अधिक निर्यात के लिए प्रोत्साहित करना।

स्पेशल एण्ड डिफरेंशियल ट्रीटमेंट: विकसित एवं विकासशील देशों की स्थितियों में भिन्नता की वजह से उत्पन्न परिस्थितियों में व्यावहारिक प्रतियोगिता हेतु विकासशील देशों के साथ लचीलापन का व्यवहार करना।

विशेष उत्पाद : विकासशील देशों को इस बात का अधिकार होगा कि ऐसे उत्पाद जो उनके देशवासियों की आजीविका तथा खाद्य सुरक्षा के लिए मौलिक रूप से आवश्यक हैं उन्हें स्पेशल प्रोडक्ट की श्रेणी में रखें। ऐसा करते समय किसी भी प्रकार के अवरोधों को हटाने का सम्बन्धित देश को अधिकार होगा। यह आज भी एक विवादित मुद्दा बना हुआ है। यह विकासशील देशों को दिया गया प्रस्तावित विशेषाधिकार है।

संवेदनशील उत्पाद : यह विकसित देशों को प्राप्त विशेषाधिकार हैं इसके अन्तर्गत विकसित देश ऐसे उत्पादों को संवेदनशील बताते हैं जो उनके देश के संदर्भ में परंपरा, संस्कृति, राजनीति आदि के कारण महत्वपूर्ण हैं। इसके तहत वे टैरिफ रेट को निर्धारित करके इन संवेदनशील उत्पादों के आयात को नियंत्रित कर सकते हैं।

शांतिधारा (पीस क्लाज) : यह भी एक स्पेशल एण्ड डिफरेंशियल ट्रीटमेंट का औजार है जो वर्ष 2003 के अंत में समाप्त कर दिया गया। इसके अन्तर्गत यह प्रावधान था कि विकसित देशों द्वारा निर्यात पर दी जाने वाली सब्सिडी को चुनौती नहीं दी जा सकती।

PEACE LIBRARY
2451
22/4/09

PEACE

पॉपुलर एजूकेशन एण्ड एक्शन सेंटर (पीस)
एफ–93, कटवारिया सराय, नई दिल्ली–110016